गांधी जन्म-शताब्दी प्रकाशन

संगठन में ही शक्ति है

गांधीजी के जीवन के प्रेरणादायक प्रसंग

•

सम्पादक
विष्णु प्रभाकर

•

१९६९
गांधी स्मारक निधि
सस्ता साहित्य मंडल
का संयुक्त प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार : १९६९
मूल्य
एक रुपया

मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस,
क्वींस रोड, दिल्ली-६

प्रकाशकीय

महात्मा गांधी के जीवन के लोकोपयोगी प्रसंगों की इस पुस्तक-माला की पहली पुस्तक पाठकों के हाथों में पहुंच चुकी है। उसमें गांधीजी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर प्रकाश डालने वाले प्रसंग दिये गए हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस पुस्तक को पाठकों ने बहुत पसन्द किया है और इच्छा प्रकट की है कि माला की शेष पुस्तकें भी उन्हें जल्दी-से-जल्दी मिल जानी चाहिए।

दूसरी पुस्तक प्रस्तुत है। इन पुस्तकों की सामग्री अनेक पुस्तकों में से चुनकर ली गई है। उन पुस्तकों तथा उनके लेखकों के नाम प्रत्येक पुस्तक के अन्त में दे दिये गए हैं। इन प्रसंगों की भाषा को अधिकाधिक परिमार्जित कर दिया गया है। यह कार्य श्री विष्णु प्रभाकर ने किया है। वह हिन्दी के जाने-माने कथाकार तथा नाटककार हैं। उन्होंने हिन्दी की अनेक विधाओं को समृद्ध किया है। इन पुस्तकों की भाषा को अपनी कुशल लेखनी से उन्होंने न केवल सरस बनाया है, अपितु उसे सुगठित भी कर दिया है। इसके लिए हम उनके आभारी हैं।

अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी श्री दिवाकरजी ने इस पुस्तक-माला की भूमिका लिख देने की कृपा की, तदर्थ हम उनके अनुग्रहीत हैं।

इन पुस्तकों का प्रकाशन राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की प्रकाशन सलाहकार समिति के, जिसके अध्यक्ष श्री रंगनाथ रामचंद्र दिवाकर हैं, तत्वावधान में गांधी स्मारक निधि तथा सस्ता साहित्य मण्डल के संयुक्त प्रकाशन के रूप में हो रहा है। पुस्तकों का मूल्य इतना कम रखने के लिए आंशिक आर्थिक सहायता निधि द्वारा दी जा रही है।

इस माला में अभी आठ पुस्तकें और निकलेंगी। हमें पूरा विश्वास है कि इन पुस्तकों का सभी वर्गों तथा क्षेत्रों में हार्दिक स्वागत होगा और इनका देश-व्यापी ही नहीं, विश्व-व्यापी प्रचार भी।

—मंत्री

भूमिका

जो बात उपदेशों के बड़े-बड़े पोथे नहीं समझा सकते, वह उन उपदेशों में से किसी एक को भी जीवन में उतारने के समझ में आ जाती है। इसलिए गांधीजी कहते थे कि मेरा जीवन ही मेरा सन्देश है। उनके जीवन का यह सन्देश उनके दैनन्दिन जीवन की घटनाओं में प्रदर्शित और प्रकाशित होता है।

संसार के तिमिर का नाश करने के लिए मानव-इतिहास में जो व्यक्ति प्रकाश-पुंज की भांति आते हैं उनका सारा जीवन ही सत्य और ज्ञान से प्रकाशित रहता है। गांधीजी के जीवन में यह बात साफ दिखाई देती है। इस पुस्तक-माला में गांधीजी के जीवन के चुने हुए प्रसंगों का संकलन करने का प्रयास किया गया है। उनका प्रकाश काल के साथ मन्द नहीं पड़ता। वे क्षण में चिरन्तन के जीवन के किसी पहलू को प्रदर्शित करते हैं। उनकी प्रेरणा स्थानीय न होकर विश्वव्यापी है।

ये प्रसंग गांधीजी के जीवन से सम्बन्वित प्रायः सभी पुस्तकों के अध्ययन के बाद तैयार किये गए हैं। हर प्रसंग की प्रामाणिकता की पूरी तरह रक्षा की गई है। फिर भी वे अपने आपमें सम्पूर्ण और मौलिक हैं।

यह पुस्तक-माला अधिक-से-अधिक हाथों में पहुंचे तथा भारत की सभी भाषाओं में ही नहीं, वरन् संसार की अन्य भाषाओं में भी इसका अनुवाद हो, ऐसी अपेक्षा है। मैं आशा करता हूं कि गांधी-जन्म-शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित यह पुस्तक-माला अपनी प्रभा से अनगिनत लोगों के जीवन को प्रेरित और प्रकाशित करेगी।

विषय-सूची

●

संगठन
में ही शक्ति है

: १ :

संगठन में ही शक्ति है

दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के समय एक बार गांधीजी का तबादला एक जेलसे दूसरी जेलमें होनेवाला था। पोलक आदि उनके कई साथी पार्क स्टेशन पर उनके आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। और भी बहुत-से भारतीय उनके दर्शनों के लिए वहां इकट्ठे हो गये थे। ट्रेन आई और सहसा एक नाटा, दुबला-पतला, सांवले रंग का व्यक्ति फुर्ती के साथ नीचे उतरा। आंखें उसकी शांत थीं और मुद्रा गंभीर। उसके सिर पर फौजी ढंग की टोपी थी, जो आगे चलकर गांधी टोपी में बदल गई। बदन पर गाढ़े की नम्बर पड़ी हुई ढीली-ढाली जाकट, घुटने तक की इजार, जिसका एक हिस्सा गहरा और दूसरा हल्का भूरा था, उसी तरह के निशान लगे हुए ऊनी रंग के मोजे और चमड़े के जूते, यही जेल-बन्दी गांधीजी की वर्दी थी। वह कपड़े और दूसरी चीजों से भरी हुई टाट की एक थैली और किताबों से भरा हुआ एक बक्स लिये हुए थे।

जब वह कुछ पूछने के लिए वार्डर की ओर मुड़े तो सभी लोगों ने उन्हें प्रणाम किया। वार्डर का व्यवहार उनके प्रति बड़ा विनम्र था। शायद वह जान गया था कि यह कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति है। उसने उन्हें बताया कि वह जेल तक पैदल जा सकते हैं।

यदि वह गाड़ी से जाना पसन्द करेंगे तो उन्हें किराया स्वयं अपनी जेब से देना होगा।

गांधीजी ने तुरन्त अपना मार्ग चुन लिया। जेल वहां से लगभग एक मील दूर थी। वह थैला अपने कंधे पर लटकाकर दिन-दहाड़े कैदी के वेश में पैदल चल पड़े। शेष लोग भी उनके पीछे चलने लगे, लेकिन किसीने उनके पास पहुंचकर उनसे बातें करने का साहस नहीं किया। कुछ ही देर में उसी तरह शांत-मौन वह जोहानिसबर्ग की जेल के क्रूर सींखचों के पीछे अदृश्य हो गये।

जेल के द्वार पर डच भाषा में यह ध्येय-वाक्य खुदा हुआ था—"संगठन में ही शक्ति है।"

अपनी मौन भाषा में गांधीजी ने मानों यही सन्देश उस समय जनता को दिया। वह स्वयं भी अन्त तक इसीसे चिपके रहे।

: २ :

यह तुमने कैसी पढ़ाई पढ़ी है ?

सेगांव में सभी स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े बीमार हो जाने पर गांधीजी के पास औषधि पूछने के लिए आया करते थे। एक दिन एक बूढ़ी धोबिन आई। आयु होगी पिचहत्तर वर्ष की। उसके बड़े जोर की खारिश हो रही थी। वह बार-बार रोती थी और मिट्टी के खपरे से अपना बदन रगड़ती थी। उसने गांधीजी से कहा, "यह खारिश मुझे खा जायगी।"

गांधीजी ने उसे सांत्वना दी और चिकित्सक को बुला भेजा। जब वह आये तो उनसे बोले, "इस बुढ़िया के खारिश है। क्या करना चाहिए ?"

चिकित्सक ने उत्तर दिया, "आप जो आज्ञा दें, सो करूं।"

गांधीजी बोले, "नीम की पत्तियां पीसकर इसे खिलाओ और पीने के लिए छाछ दो।"

चिकित्सक ने नीम की पत्तियां पीसीं और उनका एक लड्डू-सा बनाकर उस बुढ़िया को दे दिया। कहा, "ये पत्तियां खाकर छाछ पी लेना।"

कितनी मात्रा में उसे वे पत्तियां लेनी चाहिए, सब बता दिया गया था। वह चली गई। दूसरा दिन हुआ। गांधीजी ने चिकित्सक को बुलाया। पूछा, "रोगी को कितनी छाछ पिलायी ?"

चिकित्सक को तो कुछ पता नहीं था। वह सीधे गांव की ओर भागे। धोबिन के घर का पता लगाया और उससे पूछा, "तुमने कितनी छाछ पी है ?"

बुढ़िया रोते हुए बोली, "मेरे पास छाछ कहां है, जो पीती !"

चिकित्सक ने लौटकर यही बात गांधीजी को बता दी। वह सहसा उदास हो उठे। बोले, "अमरीका और जर्मनी से यही सीखकर आये हो? मैंने तुमसे उसको छाछ पिलाने के लिए कहा था। तुम्हारा धर्म था कि गांव में से छाछ मांगकर उसे पिलाते। अब भी तुमने यह किया होता तो ठीक था, लेकिन तुम तो उसे रोती छोड़कर मुझे यह सब बताने के लिए आये हो। यह कैसी पढ़ाई तुमने पढ़ी है ?"

सच्ची सत्ता अन्तरात्मा का आदेश है

एक दिन स्वाधीनता-दिवस के अवसर पर कनु गांधी के श्रम-शिविर के लगभग ढाई सौ विद्यार्थियों ने और सेवाग्राम की दूसरी रचनात्मक संस्थाओं के सदस्यों ने गांव की सफाई करने का निश्चय किया।

सब लोग दो-दो की कतार में टोकरी, बाल्टी और झाड़ू लेकर अपने काम पर निकले, लेकिन अभी कुछ ही दूर गये थे कि पुलिस ने उन्हें रोक दिया। कहा, "आप लोग कतार तोड़ दीजिए, नहीं तो आप आगे नहीं बढ़ सकेंगे।"

उन लोगों ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया और वे सब जमीन पर बैठ गये। वे सत्याग्रही थे। पुलिस का घेरा तोड़ना भी उन्होंने ठीक नहीं समझा।

समय बीतता गया, लेकिन वे उसी प्रकार बैठे रहे। अन्त में इस दृढ़ता के सामने पुलिस झुकी। वे कतार बांधकर अपने काम पर रवाना हुए।

उस संध्या को प्रार्थना के बाद अपने विचार प्रकट करते हुए गांधीजी ने इस घटना की चर्चा की। कहा, "यदि आप लोग क्रोध में आ जाते और पुलिस का घेरा तोड़ने का प्रयत्न करते तो शायद उसे गोली चलानी पड़ती, परन्तु आपके गौरवपूर्ण और दृढ़ रवैये के सामने पुलिस के हथियार वेकार हो गये। आप लोगों ने न तो गोली चलाने के लिए पुलिस को उत्तेजित किया

और न स्वयं ही विचलित हुए । आपके लिए सच्ची सत्ता आपके अन्तरात्मा का आदेश था। मैं इसीको ईश्वर या सत्य कहता हूं। इस छोटी-सी घटना में हमारे सारे स्वातन्त्र्य-संग्राम का सार आ जाता है।"

: ४ :

देकर कुछ पाने की इच्छा दान नहीं है

एक बार गांधीजी के पास एक सेठ आये। कुछ देर तक तो वह इधर-उधर की बातें करते रहे, फिर सहसा शिकायत के स्वर में बोले, "बापू देखिए, दुनिया कितनी बेईमान है। मैंने पचास हजार रुपये लगाकर धर्मशाला बनवाई। अब धर्मशाला बन जाने पर मुझे ही उसकी प्रबन्ध-समिति से अलग कर दिया गया है। जबतक वह बनी नहीं थी, कोई भी न था। बन जाने पर पचास अधिकार जतानेवाले आ गये हैं।"

सेठजी की बातें सुनकर गांधीजी जैसे कुछ सोचने लगे। थोड़ी देर बाद बोले, "आपको यह निराशा इसलिए हो रही है कि आपने 'दान' का सही अर्थ नहीं समझा है। किसी चीज को देकर कुछ पाने की इच्छा दान नहीं है, वह तो व्यापार है। और जब आपने व्यापार किया है तो लाभ और हानि दोनों के लिए तैयार रहना चाहिए। लाभ भी हो सकता है, हानि भी।"

यह सुनकर सेठजी निरुत्तर हो गये।

प्रकृति का नियम पालने दीजिये

एक वार प्राकृतिक चिकित्सा सम्मेलन के लोग गांधीजी के पास पहुंचे और बोले, "हम आपसे प्राकृतिक चिकित्सा के सम्बन्ध में बात करने आये हैं। क्या आप हमारे अध्यक्ष नहीं बनेंगे ?"

कुछ देर गांधीजी उनसे बातें करते रहे। फिर एकाएक तीव्र स्वर में बोले, "आप प्रकृति के नियम का पालन करने में ही महत्व मानते हैं न ? तब कृपा करके मुझे प्रकृति का नियम पालने दीजिए। मैं यहां कांग्रेस के काम से आया हूं, आपके सम्मेलन के लिए नहीं आया। उस सम्बन्ध में आपसे वातें करना प्रकृति का नियम भंग करना है। मैं आपको अपने कमरे में घुसने न देता, बाहर से ही विदा कर देता, परन्तु क्या करूं, वैसा करना मर्यादा और सभ्यता के विरुद्ध होता है। इसलिए पहले नियम का मैंने थोड़ा-सा त्याग किया है। अब अगर आपको इस संबंध में मुझसे कुछ वातें करनी हैं, तो आश्रम में आइए।"

मुझे कोई वेतन नहीं देता है

स्वराज्य मिलने से कुछ दिन पूर्व देश के कई भागों में बहुत बड़े पैमाने पर साम्प्रदायिक दंगे हुए थे। गांधीजी उस समय बिहार में घूम रहे थे। पटना की बात है। उस दिन बड़ी गरमी थी। इस कारण उन्होंने ठण्डे पानी का स्पंज किया। डा० सैयद महमूद ने तो बर्फ मंगवाई थी, लेकिन गांधीजी ने व्यर्थ खर्च करने को मना कर दिया। उन्होंने मटके पर ठण्डे पानी से तर कपड़ा बंधवाया। इसी पानी से भीगा कपड़ा सिर पर रखवाया। आधे-आधे घण्टे के बाद उनका तौलिया और मटके का कपड़ा दोनों बदलने पड़ते थे।

डाक्टर साहब मनु से कहने लगे, "वापूजी ने तुम्हारा काम बढ़ा दिया है। रोज एक रुपये की बर्फ मंगा लें तो सारे दिन चले और बापूजी को भी ज्यादा ठण्डक मिले।"

उन्होंने जब यह बात गांधीजी के सामने रखी तो वह खिल-खिलाकर हंस पड़े। बोले, "आप तो कमाते हैं, आपके लड़के भी कमाते हैं। परन्तु इस लड़की को या मुझे कोई वेतन नहीं देता। इसलिए यह लड़की बर्फ कहां से मंगाये? और हम इतने नाजुक भी नहीं हैं कि हमें बर्फ की जरूरत पड़े। गीला कपड़ा लपेट लिया कि वह बर्फ के पानी का ही काम करता है। फिर यह पानी निर्दोष भी होता है। बर्फ का पानी तो पिया ही नहीं जा सकता और शायद ऐसी लू में इतना ठण्डा पानी पियें तो सरदी हो जाय।"

देश भूखा है और तुम मिठाई बांटते हो!

दिल्ली की भंगी बस्ती की घटना है। यद्यपि देश पूरी तरह स्वतन्त्र नहीं हुआ था, फिर भी केन्द्र में अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार बन चुकी थी। इसी बीच २२ सितम्बर का दिन आ पहुंचा। देसी तिथि के हिसाब से उसी दिन गांधीजी की वर्षगांठ पड़ती थी।

राष्ट्रीय सरकार बनने के बाद यह उनकी पहली वर्षगांठ थी। इसलिए कैम्प के निवासियों में इस उत्सव को मनाने की बड़ी उमंग थी। चर्खा वर्ग तो चल ही रहा था, एक प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया था। उसीमें बड़े पैमाने पर सामूहिक कताई रखी गई थी। गांधीजी और दूसरे सभी नेता उसमें भाग लेनेवाले थे। कार्यक्रम पूरे दिन का था और उसका आरम्भ प्रातःकाल बाबू राजेन्द्रप्रसाद द्वारा झण्डा सलामी से होना था।

इसके बाद यह निश्चय हुआ कि स्वयंसेवकों और भंगी वस्ती में रहनेवाले बच्चों को थोड़ा-थोड़ा सूखा मेवा और एक-एक फल प्रसाद के रूप में बांटा जाय। उसीके अनुसार सब सामान भी मंगवा लिया गया। उस दिन का सारा कार्यक्रम गांधीजी को मालूम था, लेकिन प्रसाद बांटने की बात गौण समझकर किसीने उन्हें नहीं बताई थी।

अपने जन्म-दिन के उस अवसर पर गांधीजी सदा की तरह बहुत सवेरे उठे और सैर के लिए निकल गये। उसी समय किसी-

ने उनसे कहा, "आज झण्डा सलामी के बाद राजेन्द्रबाबू आपके जन्म-दिन के उपलक्ष में मिठाई बांटेंगे ।"

यह सुनकर गांधीजी बहुत दुखी हुए। इतने दुखी शायद वह पहले कभी नहीं हुए थे। कृष्ण नायर और बृजकृष्ण चांदीवाला उनके साथ थे। क्रुद्ध होकर वह उनसे बोले, "देश में अकाल पड़ रहा है, लोग भूख से बेहाल हैं, खाने को अनाज नहीं मिलता और तुम लोग मिठाई बंटवाओगे ! मेरे पास रहकर क्या तुम लोगों ने यही सीखा है? मेरे अन्तर में आग धधक रही है। तुम लोगों का यह काम उसे और भी भड़कायेगा। यह सोचना पड़ेगा कि मैं क्या करूं ?"

फिर गम्भीर होकर बोले, "इस प्रकार मैं १२५ वर्ष कैसे जी सकता हूं ? मुझमें पूर्ण अनासक्ति नहीं है। तभी मैं इतना महसूस कर रहा हूं, वरना मेरे ऊपर इस घटना का इतना प्रभाव क्यों हो ? तुम न हरिजनों की सेवा कर रहे हो, न स्वयंसेवकों की। हरिजन भिखारी नहीं हैं, जो तुम उन्हें इतनी-सी चीज दोगे। यह अहिंसा भी नहीं है। तुमने मेरा दिन खराब कर दिया।"

मेरा रक्षक तो राम है

उस बार गांधीजी करीब पौने पांच महीनें दिल्ली के बिड़ला-भवन में रहे। जैसाकि उनका नियम था, उनके साथ एक बड़ी बरात आती थी। नये-नये लोग आते थे और पुराने जाते थे। भीड़ बनी रहती थी। घर तो उनके ही सुपुर्द था। कितने मेहमान उनके ऐसे भी आते थे, जो बिड़लाजी को और उनके पासवालों को भी पसन्द नहीं थे। बिड़ला-भवन में बम गिरने के बाद बहुतों ने उन्हें बेरोक-टोक भीड़ में घुस जाने से मना किया। सरदार वल्लभभाई पटेल ने उनके लिए मिलिटरी पुलिस और खुफिया विभाग के कई व्यक्ति बिड़ला-भवन में तैनात कर रखे थे। वे भीड़ में इधर-उधर फिरते रहते थे, पर सभी जानते थे कि इस तरह से उनकी रक्षा हो ही नहीं सकती थी। जो लोग आते थे, उनकी तलाशी लेने का विचार पुलिस ने किया, मगर गांधीजी ने रोक दिया। हर सवाल का एक ही जवाब उनके पास था—"मेरा रक्षक तो राम है।"

पुलिस की यह सतर्कता स्वयं बिड़लाजी को भी पसन्द न थी। उन्होंने गांधीजी से कहा, "क्या आपको यह अनुचित नहीं लगता कि हम प्रार्थना भी बन्दूकों की छाया में करें? आपका जीवन अत्यन्त मूल्यवान है, लेकिन उससे भी ज्यादा मूल्यवान है आपकी कीर्ति। अतः क्या आप इस भांति पुलिस का अतिशय प्रबन्ध पसन्द करते हैं, जबकि आपने आजीवन इससे घृणा की है?"

गांधीजी ने विड़लाजी के साथ सहमत होते हुए कहा, "इस सम्वन्ध में वल्लभभाई से वातें करो, जो इस सारे प्रवन्ध के जिम्मेदार हैं। मैं इस प्रकार के प्रवन्धों से नफरत करता हूं। लेकिन मुझे यह सव अपनी रक्षा के लिए नहीं, वल्कि सरकार की कीर्ति-रक्षा के लिए सहन करना पड़ता है।"

: ९ :

तब तो दस रुपये और देने चाहिए

उस दिन गांधीजी शाम की प्रार्थना से लौट रहे थे कि एक तमिल भाई उनके पास आये। उन्होंने विनम्र स्वर में उनसे प्रार्थना की, "मैं तामिल-लिपि में आपके हस्ताक्षर चाहता हूं।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "मैं कोशिश करूंगा। कुछ गलती हो तो सुधार देना। लेकिन आपको इसकी दूनी कीमत देनी होगी।"

तमिल वन्धु ने उन्हें दस रुपये देना स्वीकार कर लिया। गांधीजी धीरे-धीरे याद करके लिखने लगे। अन्त में वह शुद्ध तमिल में 'मो० क० गांधी' लिखने में सफल हो गये। वोले, "देखो तो, ठीक लिखा है न?"

तमिल वन्धु वोले, "आप तो कहते थे कि आपको तमिल में अच्छी तरह लिखना नहीं आता, लेकिन आपने तो विलकुल सही लिखा है।"

इसपर गांधीजी ने कहा, "अगर मैंने बिलकुल सही लिखा है तब तो आपको मुझे दस रुपये और देने चाहिए।"

पर उन भाई के पास इतने रुपये नहीं थे। गांधीजी उनकी परेशानी समझकर बोले, "मैं कल तक यहीं रहूंगा। दे जाइयेगा। आपका विश्वास करता हूं।"

परन्तु वह तमिल बन्धु तो इतने अभिभूत हो उठे थे कि उन्होंनें तुरन्त अंगुली में पहनी हुई सोने की अंगूठी निकाली और प्रणाम करके गांधीजी के हाथ में रख दी।

: १० :

पुराने कपड़े में थेगली लगा लूंगा

सर्दी के दिनों में गांधीजी सिर पर पशमीनें का एक टुकड़ा बांधते थे। धीरे-धीरे पुराना होकर वह जर्जर हो गया। यह देखकर मनु ने उन्हें एक नया गर्म कपड़ा दिया।

गांधीजी बोले, "न तो तू ही एक कौड़ी कमाती है, न मैं कमाता हूं और न तेरे पिता की तरह मेरे पिता बैठे हैं, जो कमा-कर मुझे खर्च के लिए पैसे भेजेंगे। मैं तो गरीब आदमी ठहरा। इस तरह पुरानें कपड़े को फेंक देना मुझे नहीं पुसायगा। ला, वह पुराना कपड़ा मुझे दे। मैं उसमें थेगली लगा दूंगा।"

मनु जानती थी कि गांधीजी जो कहते हैं, वही करते हैं। वह कपड़ा ले आई और वह सुई-डोरा लेकर उसमें थेगली लगाने

बैठ गये। लगाते-लगाते जब रात के साढ़े ग्यारह बज गये तब मनु ने कहा, "अब मैं लगा देती हूं।"

गांधीजी बोले, "तू देख तो सही, मेरी परीक्षा तो कर कि मुझे यह काम आता है कि नहीं।"

और वह काम पूरा करके ही उठे। मनु ने देखा। इतनी बढ़िया थेगली उन्होंने लगाई थी मानो किसी कुशल स्त्री और दर्जी का काम हो। टांके तक बिलकुल सीधे लगे थे।

: ११ :

वह थी, इसीलिए तो मैं मातमा बन सका

गांधीजी उन दिनों दिल्ली की भंगी-बस्ती में ठहरे हुए थे। एक दिन अस्सी वर्ष के एक मेर[1] बापा, उनका जवान लड़का और लड़के की बहू उनसे मिलने आये। मनु उन्हें देखते ही पहचान गई कि ये लोग काठियावाड़ के हैं। फिर भी उसने पूछा, "क्यों बापा, आप कहां के रहनेवाले हो?"

मेर बापा ने उत्तर दिया, "बेटी, हम तो बहुत दूर के रहनेवाले हैं, पोरबन्दर, सुदामापुरी है न, वहां के। हम जातरा (यात्रा) करने निकले हैं। वहीं सुना कि हमारे दीवान का बेटा मोहनभाई बहुत बड़ा मातमा (महात्मा) हो गया है और हिन्द का सवराज (स्वराज्य) भी वह लाया है। मोहनभाई बचपन में

१. गुजरात की एक जाति

मेरे साथ खेला है। अब तो वह बेचारा मुझे कहां से पहचानेगा! लेकिन गोकुल-मथुरा तक आया, तो सोचा, चलो, मेरे भाई के दर्शन भी करता आऊं। अब तो मैं पका पान हूं, बेटी। कौन पता, फिर आया जाय कि नहीं। वह दिल्ली में रहता है, ऐसा सुनकर यहां चले आये। सच कहता हूं, मोहनभाई का बाप भी बड़ा बुलन्द आदमी था।"

मनु बोली, "बापा, बैठ जाओ। कुछ देर में गांधीजी इधर से निकलेंगे, तब तुम उनके दर्शन कर लेना।"

पांचेक मिनट में गांधीजी आते दिखाई दिये। मनु ने बूढ़े बापा से कहा, "बापा, यह तुम्हारे बचपन के सखा मोहनभाई आ रहे हैं।"

बापा ने अपनी पगड़ी सिर पर चढ़ाई। सहारे के लिए लकड़ी हाथ में ली। उधर मनु ने गांधीजी के पास जाकर सबकुछ कह सुनाया। सुनते-सुनते बापू मेर बापा के पास आ गये। "अरे, मोहन-भाई, मुझे तेरे पांव छू लेने दे," यह कहते हुए मेर बापा ने नीचे झुककर गांधीजी के चरणों में प्रणाम किया। खिलखिलाकर गांधीजी ने ऊपर उठाकर उन्हें गले से लगा लिया। इस दृश्य को देखकर सभी उपस्थित व्यक्ति आत्म-विभोर हो उठे। बापा समझ गये कि जैसे मैं मोहनभाई को नहीं भूला, वह भी मुझे नहीं भूला। उन्होंने कहा, "मोहनभाई, तू तो बहुत बड़ा आदमी बन गया है। मैं सोचता था कि तू मुझे अब काहे को पहचानेगा, पर नहीं, तूने तो मुझे पहचान लिया। छोटे थे, तब हम साथ-साथ खेला करते थे। मैं मां के काम में मदद करता था। मां रोज प्रेम से बिना मांगे मुझे रोटी खिलाती

थी। रात को हम सब राम मन्दिर जाते थे। मोहनभाई, मैं तो वहीं-का-वहीं रहा और तू बन गया मुलक का बड़ा मातमा (महात्मा)। सव नसीव की वात है, भाई। कबा बापा (गांधीजी के पिता) भी कैसे भलेमानस थे!"

पोरवन्दर की भाषा में एकवचन ही ज्यादा बोला जाता है, लेकिन इस एकवचन में कितना प्रेम भरा हुआ था। गांधीजी को अपने माता-पिता की याद हो आई। दोनों वाल-मित्र कुछ क्षण तक पुरानी वातें याद करते रहे। अन्त में मेर बापा ने पूछा, "क्यों मोहनभाई, मेरी भाभी भी यहीं है? उसके भी पैर छू लूं। अव मेरी जातरा (यात्रा) पूरी हो गई। मैंने इस छोकरे से कहा कि मातमा के पास तो मुझे जाना ही है और यह विचारा मुझको मेरे भाई के पास ले आया।"

वापा के भाभी शब्द ने पल-भर के लिए वापू को चौंका दिया। लेकिन तुरन्त ही वह समझ गये कि वह कस्तूरवा की वात कर रहे हैं। वोले, "भाई, वह तो जेल में रहते-रहते भगवान के दरवार में पहुंच गई। वह थी, इसीलिए तो मैं मातमा वन सका न!"

ये शब्द गांधीजी ने मेर वापा की भाषा में वोलने का प्रयत्न किया, लेकिन सफल नहीं हो सके, इसलिए सव लोग हँस पड़े, पर गांधीजी अपने मेर वापा से उसके परिवार के कुशल-समाचार पूछते रहे। उनके पास समय नहीं था, इसलिए उन्होंने कहा, "अमृतलाल को पहचानते हो न। यह उनके लड़के की लड़की है। यह तुमको सव वातें वतायगी। अच्छा, अव मैं विदा लेता हूं।"

इतना कहकर गांधीजी अन्दर चले गए। मेर बापा वहुत देर तक मनु से वातें करते रहे। चलते समय अपने वेटे की वह

के कानों से सोने के झुमके निकलवाकर उन्होंने दूर से ही गांधीजी के चरणों में रखे और उनके बैठने की गादी को दण्डवत प्रणाम करके चले गए ।

: १२ :

तुम गधे को संभाल लो

श्री राजमलजी ललवानी गायों के काम में बड़ी दिलचस्पी लेते थे । स्वभाव से विनोदी थे । एक बार श्री ऋषभदास रांका गो-सेवा-सम्बन्धी चर्चा के लिए उन्हें गांधीजी के पास ले गये । बातचीत के बाद उन्होंने गांधीजी से कहा, "बापूजी, आपने जो गो-सेवा-संघ द्वारा गायों की सेवा को प्रोत्साहन दिया वह तो बहुत अच्छा हुआ, लेकिन और एक ऐसा प्राणी है, जिसपर बहुत अत्याचार होते हैं । वह है गधा । उसपर दिन-भर बोझा लादा जाता है और शाम को विना कुछ चारा डाले उसे योंही छोड़ दिया जाता है । केवल गधे के मालिक ही उनपर अत्याचार करते हों, ऐसी बात नहीं । जिनका उससे प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है, वे भी पीछे नहीं रहते । किसीको यदि मूर्ख बनाने की कोशिश होती है तो उसका नाम लिया जाता है, मानो कम लेकर अधिक सेवा करना पाप हो । इसलिए बापूजी, आपको गायों की तरह गधों की सेवा के लिए भी कुछ करना चाहिए ।"

गांधीजी बोले, "जैसा तुमने कहा, मैं देखता हूं कि गधे पर

बहुत अत्याचार होता है और उसकी सेवा भी होनी चाहिए। एक आदमी के लिए यह संभव नहीं कि वह सारे काम करे। मैंने गाय को संभाल लिया है, तुम गधे को संभाल लो। और 'गर्दभ-सेवा-संघ' बनाकर इस काम को करो।

: १३ :

मेरे विनोद में भी गंभीर अर्थ रहता है

नोआखाली-यात्रा के समय भी गांधीजी सदा की भांति साढ़े तीन बजे उठते थे। उस दिन भी ऐसे ही उठे। प्रार्थना हुई, लेकिन उस दिन गर्म पानी करने में कुछ देर हो गई। रात को मनु ईंधन अन्दर रखना भूल गई थी। इसलिए वह ओस में भीग गया था। उसने अपनी ओढ़नी की चिन्दी फाड़कर उसे तेल में भिगो लिया, जिससे आग जल्दी जल सके। अचानक गांधीजी ने उसे देख लिया। जैसे ही वह दियासलाई जलाने को हुई, वह बोले, "यह चिन्दी दिखाना ज़रा।"

मनु चिन्दी गांधीजी के पास ले गई। उसे देखकर वह बोले, "यह तो नाड़ा बनाने लायक है। इसे धोकर सुखा दो। उतना तेल ही बरबाद होगा, लेकिन नाड़ा उससे ज्यादा कीमती होगा। तुम जानती हो मैं कितना बड़ा लोभी हूं! बनिया ठहरा। गर्म पानी जरा देर से मिलेगा तो क्या हुआ!"

मनु ने कहा, "पर इतना लोभ क्यों किया जाय?"

गांधीजी बोले, "हां, तुम तो उदार बाप की बेटी हो, लेकिन मेरे बाप थोड़े ही बैठे हैं, जो रुपया देंगे !"

यह बात उन्होंने विनोद में कही थी, लेकिन दूसरे ही क्षण वह गम्भीर होकर बोले, "मेरे विनोद में भी हमेशा गम्भीर अर्थ छिपा रहता है। यदि तू उसे समझना सीख ले तो काफी है।"

आखिर उस चिन्दी का नाड़ा बना और तब कहीं जाकर उन्हें सन्तोष हुआ।

: १४ :

परोपकार का मतलब है भगवान की भक्ति

नोआखाली-यात्रा के समय काम पूरा करने के लिए गांधीजी अक्सर रात के दो बजे ही जाग जाते थे। मनु को भी जगाते थे। कड़ाके की ठण्ड पड़ रही थी। मनु को उस समय उठना बहुत अच्छा नहीं लगता था, लेकिन लालटेन तो जलानी ही होती थी। एक दिन उसने गांधीजी से कहा, "आज यदि आप जल्दी न उठ सकें तो मैं भगवान के नाम पर एक दिया जलाऊंगी।"

गांधीजी हँसते हुए बोले, "भगवान ऐसा लालची नहीं है।"

और सचमुच भगवान लालची नहीं निकले। ठीक दो बजे गांधीजी उठे और मनु के गाल पर एक मीठी चपत लगाते हुए बोले, "मनुड़ी, उठ। देख, तेरे भगवान को तेरे दिये का लालच नहीं हुआ।"

मनु ने कहा, "बापूजी, आप केवल दो घण्टे के लिए लालटेन बुझाते ही क्यों हैं ? भले ही दिये की मिन्नत न फली हो, पर लालटेन को न बुझवाइये।"

गांधीजी बोले, "बात तो तेरी सच है, परन्तु इतना घासलेट मुझे कौन देगा ? लालटेन बुझा देने से मेरे दो काम हो जाते हैं। एक तो लालटेन जलाने पर तेरी नींद उड़ जाती है और यदि मैं कुछ लिखाऊं तो बिना झपकियां लिये लिख सकती है। दूसरे घासलेट बचता है। इस प्रकार मेरे 'एक पंथ दो काज' होते हैं। तू इस कहावत का मतलब समझती है ?"

मनु जो अर्थ समझती थी वह उसने बता दिया। गांधीजी बोले, "इसका एक अर्थ और भी होता है। दो काज का मतलब दो काम ही नहीं है, इसका मतलब सौ या अनेक काम भी हो सकता है। इस दुनिया में हजारों लोग अपना समय बर्बाद करके दुखी होते हैं, इससे मेरे मन में यह विचार उठता है कि हमें अपना एक पल भी व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए। शरीर को जरूरत हो उतनी ही नींद हम लें, उतना ही भोजन करें। इसी तरह और बातों में भी मर्यादा का ध्यान रखें। 'आज नो लहावो लीजिए रे काल कोणें दीठी छै, ('आज का आनन्द लूट लो, कल की कौन जाने।') हम नहीं जानते कि एक क्षण के बाद हमारा क्या होगा ? अगर ईश्वर चाहे तो हमें इसी क्षण ले जा सकता है। इसलिए हमें इस पद का अर्थ समझना चाहिए। वह सुनहरा पंथ कौन-सा है, जिसके अनुसरण से सब काम सिद्ध हों ? वह पंथ केवल परोपकार का है। परोपकार का मतलब है पड़ोसी

की सेवा अर्थात् भगवान की भक्ति। यह तू समझ ले तो बहुत कुछ सीख जायगी।"

: १५ :

मेरा हर क्षण बचाना ही मेरी सहायता है

नोआखाली-यात्रा के समय एक दिन गांधीजी श्रीरामपुर पहुंचे। वहींपर एक अमरीकी महिला उनसे मिलने आईं। उन्होंने एक भारतीय सज्जन से विवाह कर लिया था और वह टिपरा जिले के एक राहत-केन्द्र में काम करती थीं।

वह अपने साथ नोआखाली की पीड़ित हिन्दू स्त्रियों के लिए सिन्दूर, शंख की चूड़ियां और ऐसी ही दूसरी चीजें लाई थीं। वे सब उन्होंने गांधीजी के सामने रख दीं। गांधीजी ने उनसे कहा, "आप इन सब चीजों को काजिरखील--केन्द्र में जमा करा दें। वहां से ये बंटवा दी जायंगी।"

अमरीकी महिला ने कहा, "जी, बहुत अच्छा, मैं ऐसा ही करूंगी, लेकिन आगे का आपका कार्यक्रम क्या है?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "अभी तो कुछ निश्चित नहीं है।"

इधर-उधर की कुछ बातें करके वह महिला जाने के लिए उठीं और उन्होंने पूछा, "क्या कृपाकर आप मुझे यह बतायंगे कि मैं आपके इस पुनीत कार्य में किस प्रकार सहायक हो सकती हूं?"

गांधीजी ने शान्त भाव से कहा, "आप मेरे कार्य में इस रूप में सहायक हो सकती हैं कि मेरा हर क्षण बचायें और मुझे अपना काम करने दें।"

बेचारी महिला चुपचाप दबे पांव वहां से चली गईं।

: १६ :

शरीर-श्रम न करके जो खाता है वह चोर है

बंगाल-यात्रा के समय गांधीजी एक बार एक जमींदार के यहां ठहरे हुए थे। वह बड़ा आदमी था। उसके यहां काफी नौकर-चाकर थे। चारों ओर हमेशा दौड़-धूप मची रहती थी।

एक दिन गांधीजी दालान में प्रार्थना के लिए बैठे थे। वह अंधेरे में ही प्रार्थना किया करते थे। इसलिए उन्होंने प्रार्थना करने से पूर्व वहांपर बैठे हुए जमींदार महोदय से कहा कि वह बत्ती बुझा दें। बत्ती का बटन जमींदार साहब के सिर के ऊपर ही था, लेकिन वह तो थे बड़े आदमी। जैसाकि उनका स्वभाव था, उन्होंने नौकर को पुकारा, लेकिन इसी बीच गांधीजी ने स्वयं उठकर वह बटन दबा दिया। अंधेरा हो गया और वह प्रार्थना करने लगे।

प्रार्थना करने के बाद प्रवचन के समय गांधीजी ने कहा, "आजकल के पढ़े-लिखे और धनवान लोगों को शारीरिक श्रम करना बहुत बुरा लगता है, शर्म आती है। लेकिन यह गलत बात

है। गीता में लिखा है—जो शरीर-श्रम न करके अन्न खाता है वह चोर होता है।"

मेज पर एक चीनी मिट्टी की कुण्डी रखी हुई थी। भीड़ के कारण किसीका धक्का लगा और वह जमीन पर गिरकर चूर-चूर हो गई। यह देखते ही जमींदारसाहब अपने ऊंचे आसन से कूदे और फूटी हुई कुण्डी के टुकड़े जमा करने लगे। आवाज सुनकर नौकर-चाकर दौड़े हुए आये। देखते क्या हैं कि उनके मालिक घुटनों के बल बैठे हुए टुकड़े इकट्ठे कर रहे हैं। नौकर चकित होकर यह देखते रहे।

: १७ :

मेरे प्रति प्रेम हो तो मेरे कहने पर चलें

नौआखाली की यात्रा। गांधीजी देवीपुर पहुंचे तो उनका भव्य स्वागत किया गया। बड़े प्रेम और श्रद्धा से लोगों ने तैयारियां की थीं। ध्वज, तोरण और पताका आदि लगाकर सजावट की गई थी। गांधीजी का उस दिन मौनवार था, लेकिन यह सब देखकर वह बहुत गम्भीर हो उठे। संध्या के समय जब उनका मौन टूटा तो उन्होंने मनु से कहा, "तुम्हें यह जानना चाहिए कि इन लोगों ने ये सब चीजें कहां से जुटाई हैं और यहां के मुख्य कार्यकर्ता कौन हैं?"

मनु ने तुरन्त सब बातों का पता लगाया। ये सब चीजें

देहात में नहीं मिलती थीं, इसलिए कार्यकर्ता को बुलाकर गांधीजी ने पूछा, "आप ये सब चीजें कहां से लाये ?"

उस भाई नें उत्तर दिया, "बापूजी, आपके चरण यहां कब-कब पड़ते हैं ! आप आनेवाले थे, इसीलिए हम सबने आठ-आठ आने देकर तीनसौ रुपये इकट्ठे किये थे। उसीमें से हमने यह सब खर्च किया है।"

उस गांव में तीनसौ हिन्दू और पन्द्रहसौ मुसलमान रहते थे। गांधीजी सारी स्थिति को समझ गये। उन्हें दुख हुआ। बोले, "ये सब फूल और यह सब सजावट क्षण-भर में मुर्झा जायगी। मुझे लगता है, आप सब मुझे धोखा दे रहे हैं। मेरे लिए यह ठाठ-बाट रचकर आप सांप्रदायिक भावना को भड़का रहे हैं। मैं इस समय अग्नि की ज्वालाओं में जल रहा हूं। इन फूल-मालाओं के स्थान पर सूत के हार सजाये जाते तो मुझे इतना न खटकता। वे हार शोभा बढ़ाते और उनसे कपड़ा भी बनता। मेरे प्रति प्रेम प्रकट करने के लिए आपने यह सजावट की हो तो भी वह अनुचित है। आपको मेरे प्रति प्रेम हो तो मेरे कहने पर अमल करें। इतने कत्लेआम के बाद इन फूलों पर रुपया खर्च करना आपको कैसे सूझा, यह मैं समझ नहीं सका। आप तो कांग्रेस के कार्यकर्ता हैं। फिर आपने विलायती और देसी मिल का कपड़ा, रेशम और रिबन इनसबका सजावटके काम में उपयोग किया है, यह सब मेरी दृष्टि से बहुत बुरा है।"

भाषा का अविवेक भी हिंसा है

नौआखाली-यात्रा में गांधीजी की पोती मनु उनके साथ थी। एक बार वातों-ही-वातों में उसने वापू से कहा, "वापू, यह सुहरावर्दी अव ज़रा भी सुधरनेवाला नहीं है। आप उसका पत्र तो देखिए। कैसी बातें लिखता है। ऐसे आदमी को भी आप ऐसे नम्रताभरे पत्र लिखते हैं ?"

मनु को आशा थी कि गांधीजी उसका समर्थन करेंगे, परन्तु वह गम्भीर स्वर में बोले, "सुहरावर्दी के बारे में तू 'तुकार' का उपयोग कैसे कर सकती है ? वह तुझसे उमर में भी वड़े हैं और एक वड़े प्रांत के प्रधान मन्त्री हैं। उनके बारे में तुझे आदर से बात करनी चाहिए। या तो तुझे उन्हें 'सुहरावर्दीभाई' कहना चाहिए, या फिर 'सुहरावर्दी साहव'। भाषा में अविवेक, असभ्यता आये तो उसे भी मैं हिंसा ही कहूंगा।

"अंग्रेजों में जो कई अच्छी आदतें हैं, उनकी हम लोगों ने नकल नहीं की। वे अपने छोटे-से-छोटे नौकर से भी कुछ मागेंगे तो 'प्लीज़' (कृपा करके) शब्द का प्रयोग करेंगे और काम हो जाने पर 'थैंक यू' (धन्यवाद) कहे विना नहीं रहेंगे। जबतक हमारे वच्चों को भी घर और स्कूल में ऐसी सभ्यता की भाषा वोलना नहीं सिखाया जायगा, तवतक हमारा देश किसी भी तरह ऊंचा नहीं उठ सकेगा। भारत की आजादी का मैं वहुत विशाल अर्थ करता हूं। जवतक भारत नैतिक, सामाजिक,

धार्मिक और आर्थिक दृष्टि से ऊंचा नहीं उठता, तबतक मैं भारत को आजाद नहीं मानूंगा।"

: १९ :

तुम अभी गुरुदेव के पास जाओ

महात्मा गांधी और गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर दिल्ली आये हुए थे। गांधीजी के रहने का प्रबन्ध हरिजन-निवास में किया गया था। गुरुदेव कश्मीरी दरवाजे के पास लाला रघुवीरसिंह के मकान पर ठहरे थे।

गुरुदेव शान्तिनिकेतन के लिए धन संग्रह करने निकले थे। उनके साथ उनकी नाटक-मण्डली भी थी। वह बहुत वृद्ध हो चुके थे, लेकिन ऐसी अवस्था में भी वह स्वयं मंच पर आते थे। दिल्ली में उन्होंने अपने सुप्रसिद्ध नृत्य-नाट्य 'चित्रांगदा' का प्रदर्शन किया था।

गांधीजी को यह सब अच्छा नहीं लगा। गुरुदेव शान्ति-निकेतन जैसी संस्था के लिए धन इकट्ठा करने निकलें और स्वयं मंच पर आवें, क्या यह लज्जा की बात नहीं है? ऐसा ही मन्थन उनके हृदय में चलता रहा। उन्होंने महादेवभाई को बुलाया। कहा, "महादेव, तुम्हें पता है कि गुरुदेव दिल्ली आये हुए हैं। वह अपनी संस्था के लिए धन संग्रह करना चाहते हैं। इसके लिए वह देश-भर में नाटक खेलेंगे।"

महादेवभाई ने उत्तर दिया, "हां, बापू, मुझे मालूम है।"

एक क्षण के लिए गांधीजी फिर चिन्तानिमग्न हो गये। महादेवभाई कहते रहे, "आपको याद है, बापू कि दक्षिण अफ्रीका से लौटकर जब आप गुजरात में आश्रम स्थापित करना चाहते थे तब पूना में गोखले ने अपने सहायक को बुलाकर कहा था कि आपको जितने रुपयों की जरूरत पड़े, वह देता जाय। कितने उदार थे गोखले!"

गांधीजी बोले, "तुमने ठीक याद दिलाया। अच्छा, तुम अभी गुरुदेव के पास चले जाओ और उनसे पूछो कि उन्हें कितने रुपयों की आवश्यकता है? उसके बाद तुम श्री...के पास चले जाना। मैं पत्र लिख दूंगा। वह गुरुदेव के लिए उतना रुपया गुप्तदान के रूप में दे देंगे।"

और गुरुदेव को जितना चाहिए था, उतना मिल गया। शेष यात्रा का कार्यक्रम रद्द करके वह शान्तिनिकेतन वापस लौट गये।

: २० :

अंग्रेजों का आधिपत्य समाप्त होना ही चाहिए

भारत के भाग्य का निर्णय करने की योजना लेकर ब्रिटेन की सरकार की ओर से कैबिनेट मिशन आया हुआ था। उसी समय

उसके एक अधिकारी मि० बुडरो व्याट गांधीजी से मिलने आये। उन्होंने गांधीजी से पूछा, "आपको ऐसा लगता है कि हम आपकी पीठ पर से उतर रहे हैं ?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "जीहां, मुझे लगता है कि आप हमारी पीठ पर से उतर जायंगे, परन्तु आपमें इसके लिए आवश्यक बल होना चाहिए।"

व्याट मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की मांग से पैदा होनेवाली कठिनाई का जिक्र करते हुए बोले, "मान लीजिए कि जिसे हम न्यायपूर्ण हल समझें, उसे भारत पर थोपकर चले जायं तो ?"

गांधीजी ने कहा, "तब तो सबकुछ अस्त-व्यस्त हो जायगा।"

व्याट बोले, "तो क्या उसे भारत के निर्णय पर छोड़ दिया जाय ?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "हां, कांग्रेस और लीग पर छोड़ दीजिए। अपनी प्रतिभा और अंग्रेजों के सहयोग के बल पर जिन्ना ने एक बलशाली संगठन बना लिया। उसमें सब तो नहीं, परन्तु देश के अधिकांश मुसलमान शामिल हैं। मेरी सलाह है कि आप उसे आज़माइये और यदि आपको लगे कि वह सौदा नहीं निबटा सकते तो कांग्रेस को विश्वास में लीजिए, परन्तु हर हालत में अंग्रेजों का आधिपत्य समाप्त होना ही चाहिए।"

व्याट बोले, "और अंग्रेजों के जाने के बाद क्या होगा ?"

गांधीजी ने कहा, "कदाचित पंचफैसला होगा, परन्तु रक्तस्नान भी हो सकता है। यदि भारत को मैं अपने रास्ते पर चला सका तब तो अहिंसा से समस्या दो दिन में हल हो जायगी। नहीं

चला सका तो अग्निपरीक्षा लम्बे समय तक भी चल सकती है। फिर भी अंग्रेजी राज्य में आज भारत की जो हालत है, उससे बुरी हालत वह नहीं होगी।"

: २१ :

गरीब आदमी पांच आने कहां से लायगा

श्री काका कालेलकर ने छोटे बच्चों के लिए गुजराती भाषा में एक बालपोथी तैयार कराई थी। उसका नाम रखा था, 'चालन गाड़ी।' उसकी विशेषता यह थी कि वर्णमाला के दो-चार अक्षर सीखते ही बच्चे शब्द पढ़ने लगते थे। हर पृष्ठ पर चित्रकारी की गई थी। सारी पुस्तक आर्ट पेपर पर अनेक रंगों में छापी गई थी। उसका उद्देश्य यह था कि बच्चों को अक्षर-परिचय के साथ-साथ सुरुचि की शिक्षा भी मिले। मूल्य एक प्रति का पांच आने रखा था। गुजरात में उसका खूब स्वागत हुआ, क्योंकि वह सारी पुस्तक काकासाहब की कल्पना के अनुसार तैयार की गई थी, इसलिए उन्हें उसपर कुछ अभिमान भी था।

एक दिन उन्होंने गांधीजी से पूछा, "आपने 'चालन गाड़ी' देखी है?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "हां, देखी तो है। बहुत सुन्दर है, लेकिन किसके लिए बनाई गई है?"

काकासाहब यह प्रश्न सुनकर कुछ परेशान-से हुए। क्या जवाब दें? गांधीजी बोले, "तुम राष्ट्रीय शिक्षा के आचार्य हो न? भूखे रहनेवाले करोड़ों लोगों के बच्चों को विद्यादान देने का भार तुमपर है। आज की बाल-पोथियां अगर दो आने में मिलती हैं तो तुम्हारी बाल-पोथी तो दो पैसे में मिलनी चाहिए। मैं तो कहूंगा, एक पैसे में ही क्यों न मिले! लेकिन देखता हूं, तुम्हारी पोथी की कीमत पांच आने है! इसकी सजावट को देखकर यह कीमत भी कम लगती है, लेकिन सोचो तो गरीब आदमी पांच आने कहां से लायगा?"

काकासाहब बड़े लज्जित हुए। यद्यपि उन्हें उस पोथी का मोह था, फिर भी अहमदाबाद जाकर उन्होंने 'चालन-गाड़ी' का एक सस्ता संस्करण निकाला। उसमें न रंगीन स्याही थी, न आर्ट पेपर। उसका मूल्य रखा गया पांच पैसे।

: २२ :

कोई और इन धोतियों को न छुए

एक बार गांधीजी के जन्मदिन के अवसर पर श्री शंकरराव देव अपने हाथकते सूत की धोतियां बड़े भक्तिभाव से उन्हें भेंट कर गये थे। मनु ने यह सोचकर कि धुल जाने के बाद ये धोतियां अधिक सफेद हो जायंगी, उन्हें धोबी को दे दिया। अगले दिन बापू अपनी धोतियां खोजने लगे। मनु ने पूछा, "बापू, क्या खोज

रहे हैं ?"

गांधीजी ने कहा, "कल शंकररावजी जो धोतियां दे गये थे, वे कहां हैं ?"

मनु ने उत्तर दिया, "वे तो धोने के लिए मैंने धोबी को दे दी हैं।" गांधीजी बोले, "वे धोतियां धोबी को धोने के लिए कैसे दी जा सकती हैं ? ऐसा करने से तो उनकी उमर घटती है। तू आजकल मीराबहन की सेवा में लगी हुई है, इसलिए तुझे मैं दोष नहीं देता, पर इससे तेरे आलसीपन का पता तो चलता ही है। धोतियों के सफेद हो जाने से क्या मैं ज्यादा सुन्दर दिखाई दूंगा ? किसी ने कोई चीज प्रेम से दी हो तो उसका उपयोग मुझे इस तरह करना चाहिए, जिससे देनेवाले के मन को सन्तोष हो। इसमें मेरा ही दोष है। मुझे कह देना चाहिए था कि कोई और इन धोतियों को न छुए।"

: २३ :

मुझे सच्चे भारत का स्पर्श अनुभव करने दीजिये

वायसराय की घोषणा के अनुसार उनके द्वारा चुने हुए विभिन्न दलों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन शिमला में होने जा रहा था। उसमें भाग लेने के लिए कांग्रेस-कार्यकारिणी के नौ सदस्य भी जा रहे थे। वे लोग चौंतीस महीने के कारावास

के बाद जेल से छूटे थे, इसलिए उनका स्वागत करने को बम्बई और शिमला के बीच ग्यारहसौ मील के रास्ते में विभिन्न स्टेशनों पर भीड़ इकट्ठी हुई थी। लोगों के आनन्द की कोई सीमा नहीं थी। शासकों ने भी कल के विद्रोहियों के लिए सैनिक मोटरें, स्पेशल ट्रेनें और हवाई जहाज आदि की सुविधाएं प्रस्तुत की थीं, ताकि वे लोग सम्मेलन में उपस्थित हो सकें।

गांधीजी ने रेल के वातानुकूलित डिब्बे में जाने से इनकार कर दिया। वह कांग्रेसी नेताओं के लिए सुरक्षित था। उन्होंने तीसरे दर्जे में ही सफर करने का आग्रह किया। 'यूनाइटेड प्रेस ऑफ अमेरिका' के पत्र-प्रतिनिधि प्रेस्टन ग्रोवर उसी गाड़ी में गांधीजी के साथ थे। उन्हें गांधीजी के स्वास्थ्य की बड़ी चिन्ता थी। रास्ते में एक स्थान पर जब गाड़ी रुकी, उन्होंने छोटा-सा एक पर्चा लिखकर गांधीजी को दिया। उसमें लिखा था—"क्या यह अधिक बुद्धिमानी की बात नहीं होगी कि तीसरे पहर के लिए आप कांग्रेस के अधिक ठण्डे डिब्बे में यात्रा करें। इससे आप थोड़ी देर लेटकर आराम कर सकेंगे। आपको चौबीस घंटे से ज़रा भी नींद नहीं आई है। रास्ते के स्टेशनों पर आपकी नींद में बाधा पड़ेगी और इस कारण आप थके-मांदे शिमला पहुंचेंगे, इससे आपको कोई लाभ नहीं होगा।"

महात्माजी ने उत्तर लिखा, "आपके ममता-भरे पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। लेकिन मुझे इस स्वाभाविक गर्मी में पिघल जाने दीजिये। भाग्य की तरह यह भी निश्चित है कि इस गर्मी के बाद ताजगी लानेवाली ठण्डक आयगी और मैं उसका आनन्द लूंगा। मुझे सच्चे भारत का थोड़ा स्पर्श अनुभव करने दीजिये।"

सब तरह की गुप्तता पाप है

'भारत छोड़ो आन्दोलन' के समय जैसे-जैसे सरकारी दमन व्यापक और उग्र होता गया, वैसे-वैसे अधिकाधिक कार्यकर्ता अपनेको बचाने के लिए छिपने लगे। कुछके विरुद्ध हिंसा के गम्भीर अभियोग लगाये गए थे और कुछ लोगों की गिरफ्तारी के लिए इनाम भी घोषित हो चुके थे।

इनमें से कुछ मित्र गांधीजी की रिहाई के बाद तुरन्त उनसे मिलना चाहते थे। गांधीजी ने उन्हें कहला भेजा कि वे अपनी जिम्मेदारी पर आ सकते हैं। इसलिए कुछ लोग पहले जुहू में और बाद में पंचगनी में उनसे मिले। इनमें श्री रंगनाथ दिवाकर, जो बाद में भारत के केन्द्रीय मंत्री हुए और फिर बिहार के राज्यपाल बने, बंगाल के बहुत बड़े रचनात्मक कार्यकर्त्ता अन्नदा चौधरी, समाजवादी नेता अच्युत पटवर्धन और श्रीमती अरुणा आसफ अली आदि कई व्यक्ति थे। गांधीजी का दृढ़ मत था कि सब तरह की गुप्तता पाप है, इसलिए उन्होंने उनसे स्पष्ट कहा, "जिस सीमा तक हमारे ध्येय में गुप्तता आ गई है उस सीमा तक उसे हानि ही पहुंची है। हमें एक-दो आदमियों की दृष्टि से नहीं सोचना है। हमें करोड़ों लोगों की दृष्टि से विचार करना है। आज वे निर्जीव जैसे हो गये हैं। गुप्त उपायों का आश्रय लेकर हम उनमें फिर से प्राण नहीं भर सकते। सत्य और अहिंसा पर डटे रहकर ही हम उनकी तेजहीन आंखों में

फिर से ज्योति उत्पन्न कर सकते हैं।"

उन लोगों को बाहर आ जाने की सलाह देते हुए उन्होंने फिर कहा, "यदि आपका भी मेरी तरह दृढ़ विश्वास हो कि छिपकर काम करने से अहिंसा की सक्रिय भावना के विकास में मदद नहीं मिलती, तो आप बाहर आकर जेल जाने का खतरा उठा लेंगे और यह विश्वास रखेंगे कि इस तरह भोगी हुई जेल स्वयं ही स्वतन्त्रता के आन्दोलन में सहायक होती है।"

इस प्रश्न को लेकर बहुत दिन तक चर्चा होती रही। गांधीजी के विचारों से कुछ लोग अप्रसन्न हुए और कुछ प्रसन्न। अधिकांश कांग्रेसी, जो देश के विभिन्न भागों में गुप्त प्रवृत्तियां चला रहे थे, सामने आ गये। एक गुप्त कार्यकर्त्ता, जिनकी पुलिस तलाश कर रही थी, गांधीजी के आगे आत्मसमर्पण करने के लिए सेवाग्राम पहुंचे। पुलिस को इसका पता चल गया। सब-इंसपेक्टर गांधीजी के निजी सचिव प्यारेलाल के पास पहुंचा और वह चिट्ठी मांगी, जो उस कार्यकर्त्ता ने गांधीजी को दी थी। गांधीजी ने उत्तर में लिखा, "यह भाई मेरे पास आये और बोले, 'मुझे आपपर और आपके उपदेशों पर विश्वास है और मैंने आत्मसमर्पण करने का निर्णय कर लिया है।' इसलिए उन्होंने यह चिट्ठी लिखी है। मैं यह भी कह दूं कि वह मेरे सामने अपना अपराध स्वीकार कर लेते तो भी पुलिस को उसे न बताना मेरा कर्त्तव्य होता। मैं एक ही साथ सुधारक और सूचना देनेवाला नहीं हो सकता।"

: २५ :

जा, उसे अभी खोजकर ला

गांधीजी आगाखां महल में नजरबन्द थे। वहां कलैण्डर की नई तारीख बदलने का काम मीराबहन करती थीं। एक दिन उन्हें बुखार आ गया। वह तारीख नहीं बदल सकीं। मनु ने देखा कि किसीने तारीख नहीं बदली है। सोचा, लाओ, मैं ही बदल दूं।

मीराबहन पिछले दिन की पर्ची फाड़कर एक पैड में लगा देती थीं। वह पैड उस दिन काम आता था, जिस दिन गांधीजी मौन रखते थे। उस दिन वे लिखकर बातें करते थे। मनु को इस व्यवस्था का पता नहीं था। उसने पर्ची फाड़ी और बाहर फेंक दी।

गांधीजी ने अपने पैड में उस तारीख की पर्ची खोजी, लेकिन वह कहां से मिल सकती थी। उन्होंने बारी-बारी सबसे पूछा कि तारीख किसने बदली है। मनु से भी पूछा। उसने कहा, "आज तारीख मैंने बदली है और फाड़ी हुई पर्ची फेंक दी है।"

वह सोच रही थी कि बिना कहे यह काम करने के लिए गांधीजी उसकी प्रशंसा करेंगे, लेकिन वह बोले, "पर्ची बाहर फेंक दी है! जा, उसे अभी खोजकर ला।"

बस फिर क्या था! आगाखां महल में जितने भी लोग थे, सभी उसके लम्बे-चौड़े मैदान में उस पर्ची को ढूंढ़ने लगे। बगीचे में पानी देने के लिए यरवदा-जेल से जो कैदी आये थे, वे भी इस

खोज में शामिल हो गये। खोज चलती रही। कहीं शाम को जाकर वह पर्ची दिखाई दी। महादेवभाई की समाधि के पास वह मुड़ी हुई पड़ी थी। उसे पाकर गांधीजी का चेहरा आनन्द से खिल उठा। उन्होंने उस पर्ची को फैलाकर एक किताब में लगाया और रख दिया। तब कहीं उनको चैन पड़ा।

: २६ :

मैं अपना रक्तचाप यों कम कर लेता हूं

आगाखां महल से मुक्त होने के बाद गांधीजी काफी अस्वस्थ रहे। उन्हें जोर का अनीमिया हो गया था, परन्तु उन्होंने कोई भी दवा लेने से इन्कार कर दिया। वह तो ईश्वर को ही अपना परम वैद्य और महान आरोग्यदाता मानते थे, लेकिन डाक्टर भी आसानी से हार माननेवाले नहीं थे। उनकी मन्त्रणा चल ही रही थी कि एक होमियोपैथ डाक्टर उन्हें अपनी उपचार-पद्धति समझाने के लिए आये।

गांधीजी का होमियोपैथी में कोई विश्वास नहीं था। एलोपैथी पर भी उनकी श्रद्धा नहीं थी। उनका विश्वास एकमात्र प्राकृतिक चिकित्सा में ही था। परन्तु उनके स्वर्गवासी साथी देशबन्धु चित्तरंजनदास और पं० मोतीलाल नेहरू की सदा यह इच्छा रही थी कि वह एक बार होमियोपैथी को भी आजमा कर देखें। उनकी स्मृति का सम्मान करने के लिए और इसलिए भी

कि उन्हें ईश्वर पर और पंचतत्व की क्षमता पर अटल विश्वास नहीं था, उन्होंने होम्योपैथ से मिलने की बात स्वीकार कर ली।

चिकित्सक महाशय ने गांधीजी से उनके पारिवारिक इतिहास की पूछताछ शुरू की, "आपके पिताजी का स्वर्गवास कब और किस कारण से हुआ था ?"

गांधीजी बोले, "वह गिर पड़े थे। उससे उन्हें भगन्दर हो गया और पैंसठ वर्ष की आयु में ही चल बसे।"

चिकित्सक ने पूछा, "आपकी माताजी की मृत्यु कैसे हुई?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "वह विधवा हो गईं और वियोग-दुख से उनकी मृत्यु हो गई।"

चिकित्सक महाशय अधीर हो रहे थे। पूछा, "आपकी स्मरणशक्ति कैसी है ?"

गांधीजी की आंखों में शरारतभरी मुस्कान चमक उठी। बोले, "आप कल्पना कर सकें, उतनी खराब है। ब्यौरे की बात मुझे याद ही नहीं रहती। अगर आप मुझे स्मरणशक्ति फिर से प्रदान कर दें तो मैं बिना कुछ लिये आपके गुण गाता फिरूंगा।"

डाक्टर बोले, "महात्माजी, यह वरदान तो ईश्वर ही दे सकता है। मैं आपके प्रस्ताव को कितना ही पसन्द करूं तो भी मैं वैसा नहीं कर सकता।"

गांधीजी ने कहा, "तो बिना किसी प्रस्ताव के ही वह शक्ति दे दीजिये।"

अब डाक्टर ने विषय बदल दिया। बोले, "आपको याद है कि बहुत पहले जब आप हरिद्वार का मिशन अस्पताल देखने गये

थे तब मैंने आपको सारा अस्पताल घुमाकर दिखाया था।"

डाक्टर ने वाक्य के अन्तिम अंश पर जोर दिया। गांधीजी ने कहा, "हां, मुझे याद है कि मैं हरिद्वार के अस्पताल में गया था।"

डाक्टर प्रसन्न होकर बोले, "तब तो आपकी स्मृति बहुत अच्छी है।"

गांधीजी ने कहा, "नहीं, आपकी मुझे बिलकुल याद नहीं।"

डाक्टर झेंप गये। वह सब बातें लिखते जा रहे थे। साथ-ही-साथ अपने मन्तव्य भी। अब उन्होंने वह कागज गांधीजी के हाथ में दे दिया। उसमें लिखा था, "प्रकृति बड़ी चतुर, दार्शनिक और धार्मिक, स्वाध्याय के प्रेमी।"

गांधीजी ने सबकुछ पढ़कर प्रकृति-सम्बन्धी टिप्पणी के आगे एक बड़ा प्रश्न-चिह्न लगा दिया। डाक्टर बिधानचन्द्र राय पास ही बैठे थे। बोल उठे, "इसमें एक बात और जोड़ दीजिये—सद्‌गुणों के आरोप पर शंका करने की आदत।"

होमियोपैथ मुस्कराये। बोले, "इसे कहते हैं नम्रता।"

गांधीजी बीच ही में बोल उठे, "नम्रता की कमजोरी मुझमें कभी नहीं रही।"

यह सुनकर सब लोग बड़े जोर से हँस पड़े। जब वह हँसी शान्त हुई, गांधीजी ने कहा, "मैं अपना रक्तचाप इसी तरह कम किया करता हूं।"

जब मैं गरीब को चन्दन की लकड़ी में नहीं जला सकता तो बा को. . .

आगाखां महल में नजरबन्दी के समय २२ फरवरी, १९४४ को सबेरे सात बजकर पैंतीस मिनट पर कस्तूरबा गांधी भी यह असार संसार छोड़कर चली गईं। सरकार ने उनकी दाहक्रिया आम जनता के सामने करने की इजाज़त नहीं दी। संस्कार महल की सीमा में ही होना था। हां, सौ तक की संख्या में मित्र और रिश्तेदारों को अन्दर आने की इजाज़त थी।

गांधीजी ने महादेवभाई की समाधि के पास ही बा की दाह-क्रिया के लिए स्थान चुना। धीरे-धीरे सब लोग अन्दर आने लगे। तैयारियां भी चलने लगीं। दाह-क्रिया जिन ब्राह्मणों द्वारा कराई जाने को थी, वे भी आ पहुंचे।

जेलर कटेली ने शव के लिए शुद्ध खादी मंगाई थी, लेकिन गांधीजी ने कहा, "मैं खादी बेकार जलाना नहीं चाहता। यह गरीबों के काम आयगी।"

इसीलिए उसका उपयोग नहीं किया गया। श्रीमती ठाकरसी ने चन्दन की लकड़ी के बारे में गांधीजी से कहा, तो वह बोले, "जब मैं गरीबों को चन्दन की लकड़ी में नहीं जला सकता, तो बा को, जो उस आदमी की पत्नी है, जो अपने-आपको गरीब-से-गरीब मानता है, चन्दन में कैसे जला सकता हूं!"

श्री कटेली बोले, "मेरे पास चन्दन के दो पेड़ कटे पड़े हैं।"

गांधीजी ने कहा, "तुम जो भी दोगे वही काम में आयगा। आखिर यह सारा इन्तजाम सरकार को ही तो करना है!"

: २८ :

एकाध साड़ी बेच दीजिये

गांधीजी आगाखां महल में नजरबन्द थे। कस्तूरबा गांधी भी उनके साथ थीं। एक दिन उन्होंने अपने लड़के मणिलाल को तार भेजा। वह दक्षिण अफ्रीका में रहते थे और कई दिन से उनका कोई पत्र नहीं आया था। वह तार दक्षिण अफ्रीका भेजने के लिए जेल के अधिकारी कटेलीसाहब को दे दिया गया। शाम को वह गांधीजी के पास आये। कहा, "सरकार का आदेश आया है कि तार के दाम कस्तूरबा से लिये जायं।"

गांधीजी बोले, "बेचारी बा के पास तो एक पाई भी नहीं है। चाहिए तो उसकी एकाध खादी की साड़ी बेच दीजिये। तीनेक रुपये तो जरूर मिल जायंगे।"

सब खिलखिलाकर हँस पड़े। कटेलीसाहब लौट गये और उन्होंने सरकार को इस बारे में फिर लिखा। इस बार उत्तर आया कि आगाखां महल के खर्चे में यह रकम डाल दी जाय।

बापू हँसते-हँसते बोले, "सरकार जानती नहीं कि पत्थर से पानी निकले तभी मेरे पास रुपया निकले। असल में ऐसी बातें पूछी ही नहीं जानी चाहिए।"

इसी प्रसंग को लेकर उन्होंने बा से कहा, "मुझे तो लगा था कि तेरी एकाध साड़ी बेचने को देनी पड़ेगी, परन्तु ऐसी नौबत नहीं आई। मेरे पहनने के कच्छे के तो तार जितने दाम भी न मिलते, परन्तु साड़ी के मिल जाते।"

: २६ :

साथ-साथ हँसेंगे और मोटे हो जायंगे

'भारत-छोड़ो' आन्दोलन के समय कांग्रेस के सुप्रसिद्ध नेता चक्रवर्ती राजगोपालाचारी का गांधीजी से मतभेद हो गया था। उसके कारण काफी गलतफहमी फैल गई थी। इसीलिए जब गांधीजी आगाखां महल की नजरबन्दी से मुक्त हुए तो राजाजी उनसे तुरन्त मिलने के लिए नहीं आये। लेकिन गांधीजी उनसे मिलने के लिए बहुत उत्सुक थे।

आखिर उनका मिलना हुआ। उस दिन सोमवार था—गांधीजी का साप्ताहिक मौन दिवस। इसलिए वह पर्चियों पर लिखकर बातचीत कर रहे थे। वह राजाजी को यह बात समझाना चाहते थे कि वह कुछ दिन के लिए सेवाग्राम आकर रहें। राजाजी ने उत्तर दिया, "मैं तीस तारीख तक सेवाग्राम आ सकता हूं।"

गांधीजी ने लिखा, "तो उस समय तक मैं आपकी प्रतीक्षा करूंगा।"

राजाजी बोले, "जैसी आपकी इच्छा।"

गांधीजी ने लिखा, " 'आपकी प्रतीक्षा करूंगा' का क्या अर्थ है ?"

राजाजी ने उत्तर दिया, "कभी-कभी खतरों की भी प्रतीक्षा की जाती है।"

गांधीजी ने लिखा, "आप ऐसा कह सकते हैं। मैं वह खतरा भी चाहता हूं। मुझे कई बातों के बारे में आपसे विचार-विनिमय करना है।"

राजाजी ने कहा, "आशा है, उस समय तक हम दोनों अपनी कुछ बातें भूल जायंगे। तब किसी प्रकार का विचार-विनिमय करने की बात ही नहीं रह जायगी।"

गांधीजी ने लिखा, "तब हम साथ-साथ हंसेंगे और मोटे हो जायंगे।"

: ३० :

यह आश्रम तो सभी सत्याग्रहियों का है

सारा दिन काम करने के बाद जब अवकाश मिलता तब बा (कस्तूरबा गांधी) गांधीजी के सिर में तेल मलने के लिए उनके पास आती थीं। अक्सर गांधीजी दिन-भर के काम से इतने थक जाते थे कि बा तेल मलती रहतीं और वह सो जाते। एक रात

वह कुछ देर से आई। गांधीजी ने पूछा, "आज इतनी देर कैसे हो गई?"

बा ने उत्तर दिया, "सबको खिलाकर मैंने खाया। फिर बर्तन साफ किये। रसोईघर धोया। उसके बाद रामदास के लिए रास्ते का खाना और दो-चार दिन का नाश्ता तैयार करने बैठी। वह बम्बई जा रहा है।"

गांधीजी बोले, "ऐसा कितने दिन चलेगा! कल रामदास बम्बई जा रहा है, परसों तुलसी नेपाल जायगा, तरसों सुरेन्द्र दिल्ली जायगा। इस तरह कोई-न-कोई आश्रम से बाहर जाता ही रहेगा। क्या तू हर आदमी के लिए खाना और नाश्ता बनायगी?"

बा ने उत्तर दिया, "नहीं, लेकिन रामदास मेरा लड़का है। इसलिए आपके सिर में तेल मलना छोड़कर भी उसकी पसन्द का खाना मैंने बना दिया। सारे आश्रमवासियों के लिए उनकी अपनी पसन्द का खाना या नाश्ता मैं कैसे बना सकती हूं! आप तो महात्मा ठहरे, इसलिए बाहर से आनेवाले सभी आपके लड़के हैं। लेकिन मैं अभी महात्मा नहीं बन पाई।"

बापू ने कहा, "ठीक है, यह विचार करने योग्य बात है। लेकिन इस समय हम कहां बैठे हैं?"

बा बोलीं, "सत्याग्रह-आश्रम में।"

बापू ने कहा, "हम अपना राजकोट का घरबार छोड़कर यहां क्यों रहते हैं?"

बा बोलीं, "देश-सेवा करने के लिए। सब भाई-बहन एक साथ मिलकर देश की सेवा करने के लिए यहां आये हैं।"

बापू ने पूछा, "जो भाई-बहन दूर-दूर से अपने मां-बाप को छोड़कर हमारे पास आये हैं, वे क्या हमें अपने मां-बाप से कम मानते हैं ?"

बा ने उत्तर दिया, "ज़रा भी नहीं। वे लोग तो हमें अपने मां-बाप से भी अधिक प्यार करते हैं। आपके लिए तो उनके मन में अपार भक्ति है। इसीलिए तो वे अपने मां-बाप को छोड़कर यहां आये हैं। आपसे शिक्षा पाकर वे देश के कोने-कोने में जायंगे और लोगों की सेवा करेंगे।"

बापू ने कहा, "तो तू अब सोच, हमारा धर्म क्या है? मां अपने बच्चों को सबसे ज्यादा प्यार करती है, यह स्वाभाविक है। इसलिए रामदास पर तेरे अधिक प्रेम की बात मैं समझता हूं। अगर हम अपने घर होते तो हमारी सम्पत्ति और प्रेम के अधिकारी हमारे लड़के ही होते, लेकिन यह आश्रम तो सभी सत्याग्रही सेवकों का है। इसलिए यहां जैसे दूसरे लोग रहते हैं, वैसे ही रामदास को रहना चाहिए।"

: ३१ :

मैं जरूरत से ज्यादा भोजन नहीं चाहता

गांधीजी धीमी आंच में सिके डबल रोटी के टुकड़े फीके दूध में डालकर खाया करते थे। उन दिनों श्री परशुराम मेहरोत्रा उनके पास रहते थे। एक दिन उन्होंने दूध में एक-दो टुकड़े

अधिक डाल दिये। सोचा कि आज परिश्रम कुछ अधिक करना पड़ा है, इसलिए भूख भी कुछ अधिक लगी होगी।

गांधीजी ने कटोरा अपने हाथ में लेकर चम्मच से सदा की तरह उन रोटी के टुकड़ों को उलटा-पलटा। वह तुरन्त जान गये कि आज भोजन की मात्रा कुछ अधिक है। उन्होंने एक आश्रम-वासी से पूछा कि कितने टोस्ट डाले हैं ?

वह भाई मेहरोत्राजी को बुला लाये। उन्होंने आकर कहा, "बापूजी, हम यू० पी० वालों को परोसने में कुछ अधिक उदारता बरतना सिखाया जाता है। आप इतना कठिन परिश्रम करते हैं। भूख लग आई होगी। दो तोला भोजन अधिक आपके पेट में पहुंचे तो हमें प्रसन्नता होगी। इसी भाव से प्रेरित होकर मैंने कुछ मोटे टोस्ट काटे थे।"

गांधीजी कुछ क्षण सोचते रहे। फिर उन्होंने आदेश दिया, "अब से तराजू में तौलकर एक निश्चित मात्रा में रोटी डाली जाया करे। टोस्ट मोटे होंगे तो कम चढ़ेंगे। मैं जरूरत से ज्यादा भोजन नहीं लेना चाहता।"

और उसी दिन बाजार से एक तराजू मंगायी गई, लेकिन मुसीबत अभी भी दूर नहीं हुई। डबल रोटी के किनारे की छीलन उनके दूध में नहीं डाली जाती थी। गांधीजी को यह पसन्द नहीं था। वह नहीं चाहते थे कि रोटी के किनारे का वह कड़ा भाग फेंका जाय या और किसीको दिया जाय। एक दिन उन्होंने कहा, "रोटी के किनारेवाले कड़े हिस्से कहां हैं? उन्हें ले आओ। मैं उन्हें खाऊंगा।"

और उस दिन से रोटी का सारा भाग वह स्वयं ही खाने लगे।

सत्याग्रही विरोधी की कठिनाइयों का लाभ नहीं उठाता

गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के विरुद्ध सत्याग्रह कर रहे थे। उन्हीं दिनों की बात है। वहां एक बहुत बड़ी हड़ताल हुई। रेल, डाकतार, यातायात के सभी साधन, सबकुछ अव्यवस्थित हो गया। सारा राज्य ही जैसे पंगु हो गया हो। इस हड़ताल का यही उद्देश्य था। वहां गर्मदल के कुछ ऐसे लोग थे, जिन्हें यह बिलकुल पसन्द नहीं था कि यूनियन का ब्रिटेन के साथ कोई सम्बन्ध हो। वे दक्षिण अफ्रीका में ब्रिटिश साम्राज्य का नामोनिशान भी नहीं रहने देना चाहते थे। इन लोगों ने ही यह हड़ताल करवाई थी। सरकार बड़ी परेशानी में पड़ गई।

इसी समय हड़तालियों के नेताओं ने गांधीजी से कहा, "आप लोग भी अपना सत्याग्रह अभी आरम्भ कर दीजिये।"

स्थिति सचमुच बहुत अनुकूल थी। भारतीय लोग दक्षिण अफ्रीका की सरकार से बहुत नाराज थे। तीन पौण्ड के कर के सम्बन्ध में सरकार ने उनके साथ विश्वासघात किया था। पार्लामेंन्ट में इमीग्रेशन कानून पास हो चुका था और न्यायाधीश सर्ले ने भारतीय विवाह के सम्बन्ध में जो निर्णय दिया था, उसके अनुसार सब भारतीयों के विवाह अवैध हो गये थे। इस दृष्टि से यह अवसर बहुत ही उपयुक्त था, परन्तु सत्याग्रह की लड़ाई क्या दूसरी लड़ाइयों जैसी होती है। गांधीजी ने इस अवसर का

लाभ उठाने से स्पष्ट इंकार कर दिया। कहा, "सत्याग्रही विरोधी की कठिनाइयों से लाभ नहीं उठाना चाहता। ऐसी दुर्बलता उसे शोभा नहीं देती। सरकार स्वयं परेशानी में है। ऐसे समय में सत्याग्रह आरम्भ करना मारते को मरना जैसा है। सत्याग्रहियों की वीरता ऐसी नीति को निंद्य मानती है।"

: ३३ :

तुम्हारे हाथ की बनी हो तो दो

हरिपुरा-कांग्रेस के अधिवेशन के समय एक प्रियजन गांधीजी के लिए एक छोटी-सी हरे रंग की घड़ीदार (फोल्डिग) मेज ले आये। वह मेज फैक्ट्री में तैयार की गई थी। उसे बिस्तर पर रखकर उसपर खाने-पीने की चीजें रखी जा सकती थीं। गांधीजी ने पूछा, "यह मेज क्या तुमने खुद बनाई है ?"

उन्होंने उत्तर दिया, "जी नहीं, मैंने तो नहीं बनाई, पर है अपने देश की ही बनी हुई। इसीलिए ले आया हूं।"

गांधीजी बोले, "चाहे स्वदेशी ही क्यों न हो, मैं इसे नहीं लूंगा। तुम्हारे अपने हाथ की बनी हो तो दो, नहीं तो ले जाओ।"

यह सुनकर उन भाई का मन दुखी हो आया। तब गांधीजी ने उस मेज का एक दिन के लिए उपयोग करना स्वीकार कर लिया। दूसरे दिन उसे लौटा दिया। उस दिन उनका मौन था, इसलिए एक चिट्ठी पर लिखा, "अच्छा हुआ, तुम आ गये। यह

हरी मेज मुझे अखरती है। यह गांव में शोभा नहीं देगी। इसलिए इसे वापस ही ले जाओ।"

: ३४ :

अभी आपको रोटी की चिन्ता तो नहीं है

गांधीजी का सुप्रसिद्ध अस्पृश्यता-निवारण, सम्बन्धी दौरा मध्य प्रान्त (वर्तमान मध्य प्रदेश) से आरम्भ हुआ था। मध्य प्रान्त के शेर बैरिस्टर अभ्यंकर उनके साथ थे।

घूमते-घूमते वे नागपुर पहुंचे। उस दिन की सभा में लाखों व्यक्ति एकत्र हुए थे। महात्माजी को धन देने के लिए सभी एक-दूसरे से होड़ लगा रहे। उस समय बैरिस्टर अभ्यंकर की पत्नी ने अपने शरीर के सारे जेवर उतारकर उन्हें दे दिये। बैरिस्टर ने कहा, "बापू, ये आखिरी जेवर हैं। अब मेरी पत्नी के पास कुछ नहीं बचा।"

गांधीजी बोले, "लेकिन अभी आपको रोटी की चिन्ता तो नहीं है न ? जिस दिन सुनूंगा कि अभ्यंकर को खाना नहीं मिल रहा है, उस दिन खुशी से नाचूंगा।"

पहले इन सबकी व्यवस्था कीजिये

'गांधी सेवा संघ' का वार्षिक सम्मेलन कर्नाटक के हुदली ग्राम में होना निश्चित हुआ था। गांव के बाहर एक सुन्दर स्थान को इस काम के लिए चुना गया। प्राकृतिक दृष्टि से वह स्थान अत्यन्त सुन्दर था। चारों ओर हरे-भरे पहाड़ थे। उनकी तलहटी में मण्डप तैयार किये गए। गर्मी की ऋतु थी। वर्षा की कोई सम्भावना नहीं थी। परन्तु ठीक सम्मेलन के अवसर पर एकाएक आकाश में सुरमई घटाएं घिर आईं। देखते-देखते धुआंधार वर्षा होने लगी। चारों ओर पानी-ही-पानी भर गया। सदस्यों के पास जो कुछ भी था, वह सब भीग गया। किसीको सूझ ही नहीं रहा था कि क्या किया जाय ? ऐसी हालत में सम्मेलन की कार्यवाही कैसे चलती ?

गांधीजी, सरदार पटेल, राजेन्द्रबाबू, खान अब्दुल गफ्फार खां, गंगाधर राव देशपाण्डे, किशोरलाल मशरूवाला आदि सभी सुप्रसिद्ध नेता वहांपर उपस्थित थे। उन्होंने इस समस्या पर विचार किया और निश्चय किया कि सब लोग गांव में चलें और वहींपर लोगों के घरों में सोने का प्रबन्ध हो। यहांपर रात नहीं बिताई जा सकती। वर्षा के रुकने की कोई सम्भावना नहीं है।

देशपाण्डेजी ने सब बातों का प्रबन्ध करने के लिए कार्यकर्ताओं को गांव में भेजा। कुछ ही क्षण बाद उन्होंने गांधीजी से

कहा, "चलिये बापू, आपका प्रबन्ध तो हो गया है। दूसरे लोगों की व्यवस्था भी धीरे-धीरे हो जायगी।"

सरदार पटेल बोले, "ठीक है, पहले बापू को ले जाइये। हम सब बाद में आ जायंगे।"

दूसरे नेताओं ने भी इस बात का समर्थन किया, लेकिन गांधीजी ने वहां से जाने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। कहा, "मैं नहीं जाऊंगा। पहले आप इन सबकी व्यवस्था कीजिये। सबसे अन्त में मुझे ले जाइये।"

वे लोग जानते थे कि गांधीजी नहीं जायंगे और वह नहीं गये।

व्यवस्था करते-करते बहुत रात बीत गई। धीरे-धीरे सभी सदस्य गांव में चले गये। सवेरा हुआ। वे लोग तैयार होकर देशपाण्डेजी के घर पर पहुंचे। सरदार पटेल, राजेन्द्रबाबू, खानसाहब आदि सभी लोग वहांपर थे, लेकिन गांधीजी नहीं थे। किसीने पूछा, "गांधीजी कहां हैं?"

उत्तर मिला, "वह गांव में नहीं आये। एक मण्डप में ही उन्होंने सारी रात बिताई। वहांपर कुछ टीन डालकर उनके लिए व्यवस्था करनी पड़ी। बा और मणिबहन आदि भी वहीं पर रहीं।"

इधर ये लोग बातें कर रहे थे, इधर अपने स्वभाव के अनुसार गांधीजी सवेरे उठे। सब काम किये और फिर कीचड़ में चलकर 'कुमरी' आश्रम गये। दूसरे नेता भी वहीं पहुंचे। वहीं पर सम्मेलन का कार्य आरम्भ हुआ।

: ३६ :

यह छतरी मैं नहीं लूंगा

हरिजन-कोष के लिए धन इकट्ठा करते हुए गांधीजी सारे देश में घूम रहे थे। उसके लिए वह केवल रुपये-पैसे ही स्वीकार नहीं करते थे, दूसरी मूल्यवान वस्तुएं भी ले लेते थे। स्त्रियों के गहनों के लिए तो उनका विशेष आग्रह रहता था। लड़कियों को हस्ताक्षर देने का मूल्य उन्होंने एक चूड़ी रखा था।

इसी तरह घूमते हुए वे कोचीन राज्य (वर्त्तमान केरल) के एक छोटे-से गांव में पहुंचे। वहां एक लड़का उनके पास आया। उसके पास पैसे नहीं थे। छतरी थी। वही छतरी वह गांधीजी को देने लगा।

गांधीजी ने कहा, "यह छतरी मैं नहीं लूंगा। यहां यह बहुत जरूरी चीज है। मैं इसे कैसे ले सकता हूं!"

: ३७ :

सात दिन का उपवास करूंगा

हरिजन-प्रवास के समय घूमते-घूमते गांधीजी अजमेर पहुंचे। उन्हींके साथ सदलबल स्वामी लालनाथ भी पहुंचे। ये लोग कट्टर सनातनी थे और गांधीजी के विरोधी थे। जहां भी वे जाते

ये लोग भी उनके पीछे-पीछे पहुंच जाते। उन्हें काले झण्डे दिखाते और अस्पृश्यता-निवारण के विरुद्ध प्रचार करते। उनका उद्देश्य येन-केन-प्रकारेण गांधीजी की यात्रा में विघ्न उपस्थित करना था।

गांधीजी जो स्वतन्त्रता अपने लिए चाहते थे वही विरोधियों के लिए भी चाहते थे। वह हर जगह स्वामी लालनाथ और उनके दल का ध्यान रखते थे। अपने साथियों को और जनता को समझाते रहते थे कि वे विरोधियों के प्रति सहनशील रहें।

परन्तु सभी व्यक्ति एक-जैसे नहीं होते और सब समय अपनेको वश में रखना भी कठिन हो जाता है। फिर स्वामी लालनाथ तो प्रतिक्षण संघर्ष आमन्त्रित करते थे। इसलिए पूरी सावधानी रखने पर भी अजमेर में उनके दल के साथ मार-पीट हो गई। स्वामीजी को काफी चोट लगी। गांधीजी बहुत व्यथित हुए। उन्होंने तुरन्त स्वामीजी को अपने संरक्षण में ले लिया और उनकी मरहम-पट्टी करवाई।

इतना ही नहीं, जब वह भाषण देने के लिए उठे तो उन्होंने स्वामी लालनाथ को मंच पर बुलाया। उनके घाव दिखाकर जनता को लज्जित किया और स्वामी लालनाथ से कहा, "आप निस्संकोच होकर इसी मंच से अपने विचार प्रकट कर सकते हैं।"

वह यहीं नहीं रुके। जब वह करांची पहुंचे तो उन्होंने घोषणा की, "इस घटना के प्रायश्चित्त-स्वरूप मैं सात दिन का उपवास करूंगा।"

शिक्षित लोगों के अंदर दया-भाव सूख गया है

उस वर्ष विद्यार्थियों के विश्व-सम्मेलन (स्टुडेन्ट्स वर्ल्ड फैडरेशन) का अधिवेशन मैसूर में हुआ था। विद्यार्थियों के बीच काम करनेवाले रेवरेण्ड माट् उसके अध्यक्ष थे। हिन्दुस्तान में आने पर उनके लिए यह स्वाभाविक था कि वह गांधीजी से मिलने आते। अहमदाबाद जाकर उन्होंने मिलने का समय मांगा।

उस दिन गांधीजी बहुत व्यस्त थे। रात को सोने से पहले दस मिनट का समय ही वह दे सके।

रेवरेण्ड माट् ठीक समय पर आये। गांधीजी आंगन में लेटे हुए थे। पास ही एक बेंच रखी हुई थी। उसपर आकर वह बैठ गये। वह अपने सवाल लिखकर लाये थे। उन्होंने हरिजन-आन्दोलन के बारे में कुछ बातें पूछीं। जानना चाहा कि मिशनरी लोगों की सेवा का क्या असर हो रहा है। उसके बाद उन्होंने दो ऐसे प्रश्न पूछे, जो व्यक्तिगत होकर भी बहुत महत्वपूर्ण थे। उनका पहला प्रश्न था, "आपके जीवन में आशा-निराशा के बहुत-से प्रसंग आते होंगे। उनमें आपको किस बात से अधिक-से-अधिक आश्वासन मिलता है?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "भारत की जनता को चाहे जितना ही परेशान किया जाय, फिर भी वह अपनी अहिंसावृत्ति नहीं छोड़ती। इस बात से मुझे सबसे अधिक आश्वासन मिलता है।"

रेवरैण्ड मॉट् ने पूछा, "और ऐसी कौन-सी बात है, जो आपको दिन-रात चिन्तित रखती है और जिससे आप हमेशा अस्वस्थ रहते हैं ?"

गांधीजी एक क्षण के लिए रुके। फिर बोले, "शिक्षित लोगों के अन्दर दया-भाव सूख गया है। इस बात से मैं हमेशा चिन्तित रहता हूं।"

: ३९ :

इसमें क्या हर्ज है ?

उन दिनों गांधीजी जूहू में श्री जहांगीर के घर में ठहरे हुए थे। उनके लिए अंगूर आदि जो फल आते थे, वे रेफ्रीजरेटर में रखे रहते थे। एक दिन मीराबहन ने रेफ्रीजरेटर खोलकर देखा तो पाया कि अंगूरों के पास ही मांस और शराब भी रखी हुई है।

यह देखकर वह जहांगीर के पास गईं और नाराज होकर बोलीं, "आज बापू को बिना अंगूर के रखना पड़ेगा।"

जहांगीर बहुत दुखी हुए। वह गांधीजी के पास जाकर क्षमा मांगने लगे। बोले, "मुझे बहुत खेद है कि आज आपको अंगूर के बिना नाश्ता करना पड़ेगा। मैं नहीं जानता था कि मेरा नौकर मांस भी रेफ्रीजरेटर में ही रखता है। जो कुछ हुआ, उसके लिए मुझे बहुत खेद है।"

गांधीजी ने मीराबहन को बुलाकर कहा, "इसमें क्या हर्ज है ? अंगूर मांस की तश्तरी में तो नहीं रखे हैं न ? ले आओ, मैं अंगूर लूंगा।"

: ४० :

मैं ही महादेव का गिरसप्पा हूं

गांधीजी दक्षिण में खादी-यात्रा कर रहे थे। यात्रा करते हुए अपने दल के साथ वह शिमोगा के पास पहुंचे। गिरसप्पा का सुप्रसिद्ध जलप्रपात वहां से बहुत पास है। लगभग दस-बारह मील दूर। राजगोपालाचार्य ने वहां जाने के लिए मोटर का प्रबन्ध किया था। दल के कई लोग जा रहे थे। काकासाहब कालेलकर ने गांधीजी से प्रार्थना की कि वह भी चलें, लेकिन वह तैयार नहीं हुए। तब काकासाहब ने कहा, "जब लार्ड कर्जन भारत आया था, तब पहला अवसर मिलते ही वह गिरसप्पा देखने गया था। दुनिया में यह प्रपात सबसे ऊंचा है।"

गांधीजी ने पूछा, "नियागरा से भी ?"

काकासाहब ने उत्तर दिया, "नियागरा में गिरनेवाले पानी का घनाकार सबसे अधिक है, लेकिन ऊंचाई में उससे अधिक ऊंचे सैकड़ों प्रपात हमारे इस देश में हैं। गिरसप्पा का पानी नौ-सौ साठ फुट की ऊंचाई से एकदम सीधा नीचे गिरता है। दुनिया में कहीं भी इतना ऊंचा प्रपात नहीं है।"

गांधीजी ने धीरे-से पूछा, "और आसमान से जो यह बारिश गिरती है, वह कितनी ऊंचाई से ?"

काकासाहब निरुत्तर हो गये। लेकिन एक क्षण रुककर उन्होंने कहा, "अच्छा, आप नहीं आते तो न सही, महादेवभाई को तो भेज दीजिये।"

गांधीजी ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "महादेव नहीं आयगा। मैं ही उसका गिरसप्पा हूं।"

काकासाहब भूल गये थे कि वह उनका 'यंग इण्डिया' का दिन था। उस दिन अगर वह सामग्री तैयार न करते तो अखबार नहीं निकल सकता था। इसलिए उन्हें यह अच्छा नहीं लगा। उन्होंने चिढ़कर कहा, "न आप आते हैं, न महादेव को भेजते हैं तो फिर मैं भी क्यों जाऊं ? मैं नहीं जाऊंगा।"

गांधीजी ने शान्त भाव से उन्हें समझाते हुए कहा, "गिरसप्पा देखने जाना तुम्हारा धर्म है। तुम अध्यापक हो न। देख आओगे तो अपने विद्यार्थियों को भूगोल का एक अच्छा पाठ पढ़ा सकोगे। तुम्हें तो जाना ही चाहिए।"

: ४१ :

वहीं पर अड़ी रहना

गांधीजी उन दिनों राजकोट में उपवास कर रहे थे। शायद दूसरा या तीसरा दिन था। अचानक कस्तूरबा गांधी उनके

सामने आकर खड़ी हो गईं।

गांधीजी ने पूछा, "तू कैसे आ गई?"

सरकार ने उनसे कहा था कि वह चाहें तो गांधीजी से मिलने जा सकती हैं। इसीलिए वह आई थीं। लेकिन रात हो जाने पर भी उनको वापस ले जाने के लिए कोई नहीं आया। शायद इस बहाने सरकार का इरादा उन्हें छोड़ देने का था। वह जेल में थीं न! लेकिन गांधीजी यह सब कैसे सह सकते थे? उन्होंने कहा, "छोड़ना ही है तो सरकार सबको छोड़े। वह भी नियम के अनुसार छोड़े।"

इसी तरह सोचते-सोचते रात का एक बज गया। जेल से कोई भी नहीं आया। गांधीजी ने तब बा से स्वयं ही लौट जाने को कहा।

एक व्यक्ति ने कहा, "बापू, रास्ता तो बन्द है। पास के बिना तो वहां कोई भी नहीं जा सकता। वे बा को रास्ते में ही रोक लेंगे।"

बापू बा से बोले, "तुझे कोई रास्ते में रोके तो तू वहीं सत्याग्रह कर देना। वहींपर अड़ी रहना। चाहे सारी रात सड़क पर क्यों न रहना पड़े।"

बा गांधीजी के साथ कोई तर्क नहीं कर सकती थीं। वह चुपचाप रवाना हो गईं। लेकिन उन्हें सारी रात सड़क पर डाले रखने की हिम्मत सरकार में नहीं थी। वह उन्हें फिर से डाक-बंगले ले गई। बाद में गांधीजी ने इस सम्बन्ध में सरकार को एक पत्र लिखा। दूसरे दिन बा आदि को नियमानुसार छोड़ दिया गया और वह गांधीजी के पास आ गईं।

तेरी मोटी बा जल्दी ही आनेवाली है

राजकोट-सत्याग्रह के समय जब मणिबहन पटेल और मृदुला साराभाई भी गिरफ्तार कर ली गईं तो कस्तूरबा गांधी वहां जाने को आतुर हो उठीं। इससे कुछ दिन पहले ही उन्होंने रामदास गांधी के छोटे पुत्र की देखभाल का काम संभाला था। वह लड़का अपनी दादी से इतना हिल-मिल गया था कि क्षण-भर भी उनसे दूर रहने के लिए तैयार नहीं था।

लेकिन कस्तूरबा गांधी राजकोट चली ही गईं। लड़का बहुत व्यथित हो उठा। दिन-भर मोटी बा (दादी) का नाम लेकर रोता-कलपता रहता था। गांधीजी स्वयं उन दिनों बहुत व्यस्त रहते थे, लेकिन जब लड़का बहुत दुखी हुआ तो अन्त में उन्हें उसकी ओर ध्यान देना पड़ा। उसे अपने पास बुलाकर वह बोले, "तेरी मोटी बा जल्दी ही आनेवाली है।"

फुरसत हुई। लेकिन बालक कान्हा बीच-बीच में आंख खोलता और शिकायत करता, "मोटी बा तो अभीतक नहीं आई।"

बनावटी गम्भीरता से उसे झिड़ककर गांधीजी कहते, "तू बार-बार ध्यान भंग करता है, इसीलिए मोटी बा नहीं आती। अगर तू ऐसा ही करता रहा, तो वह बिल्कुल नहीं आयगी।"

यह मज़ाक दो-तीन दिन तक चलता रहा। तबतक गांधीजी ने बच्चे को उसकी मां के पास देहरादून भेजने का प्रबन्ध कर दिया।

: ४३ :

अब मामला फतेह हो जायगा

गांधीजी चम्पारन में निलहे गोरों की जांच कर रहे थे। उन्हें सरकार की ओर से आज्ञा मिली कि वह चम्पारन छोड़कर चले जायं। पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ने कहा, "आप तुरन्त यहां से चले जाइये।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "मैं यहां से नहीं जा सकता। मुझे तो और आगे बढ़ना है और जांच करनी है।"

यह सरकारी आज्ञा का अनादर था। दूसरे दिन उन्हें अदालत में हाजिर होने का समन मिला। गांधीजी को लगा, अब वह गिरफ्तार कर लिये जायंगे। उन्होंने सारी रात जागकर वायसराय और नेताओं के लिए पत्र लिखवाये। कचहरी में देने

के लिए वक्तव्य भी तैयार कर लिया। उस समय उनके पास दो व्यक्ति—बाबू धरणीधर और बाबू रामनौमी—दुभाषिए के रूप में काम करते थे। गांधीजी ने उनसे पूछा, "यदि मैं गिरफ्तार कर लिया गया तो आप लोग क्या करेंगे ?"

वे सम्भवतः इस प्रश्न की गम्भीरता को नहीं समझ पाये। धरणीधर ने मज़ाक में कहा, "आप गिरफ्तार हो जायंगे तो दुभाषिए का काम नहीं रह जायगा। हम लोग अपने-अपने घर चले जायंगे।"

गांधीजी ने कहा, "इस काम को ऐसे ही छोड़ देंगे ?"

अब तो उन्हें कुछ सोचना पड़ा। धरणीधर आयु में बड़े थे। बोले, "हम जांच का काम जारी रखेंगे और जब सरकार हमको यहां से चले जाने के लिए कहेगी तो चले जायंगे। हम जेल जाने के लिए तैयार नहीं हैं, लेकिन हमारे स्थान पर दूसरे वकील जायंगे। उनको भी जाने की आज्ञा मिली, तो तीसरी टोली आयगी। जांच का काम बन्द नहीं होगा।"

इस उत्तर से गांधीजी कुछ संतुष्ट हुए, परन्तु पूरी तरह से नहीं। स्वयं वे लोग भी अपने उत्तर से संतुष्ट नहीं थे। रात-भर यह प्रश्न उनके मन में उमड़ता-घुमड़ता रहा—यह आदमी न मालूम कहां से आकर किसानों का कष्ट दूर करने के लिए जेल जा रहा है और हम लोग, जो यहां के रहनेवाले हैं और जो किसानों की सहायता करने का दावा करते हैं, इस तरह घर चले जायं ? यह तो अच्छा नहीं मालूम होता। लेकिन जेल कैसे जायं, वह तो भयंकर जगह है। उससे बचने के लिए लोग क्या नहीं करते, लेकिन यह आदमी तो दक्षिण अफ्रीका में इतना काम

करके आया है। यह जेल से ज़रा भी नहीं डरता। इसे अपने बाल-बच्चों की ज़रा भी चिन्ता नहीं।...

रातभर वे इसी तरह सोचते रहे। सवेरे जब वे लोग कचहरी जाने के लिए रवाना हुए तो उनकी भावनाएं उमड़ पड़ी। वे अपनेको रोक नहीं सके। उन्होंने गांधीजी से कहा, "आपके जेल जाने के बाद अगर जरूरत पड़ी तो हम भी जेल जायंगे।"

यह सुनकर गांधीजी का चेहरा दीप्त हो उठा। प्रसन्न होकर वह बोल उठे, "अब मामला फतेह हो जायगा।"

: ४४ :

तुम्हें मन से अंग्रेजों का डर निकाल देना होगा

सी० एफ० एण्ड्र्यूज, जो वाद में दीनबन्धु एण्ड्र्यूज के नाम से प्रसिद्ध हुए, गांधीजी के परम भक्त थे। वह अक्सर गांधीजी से मिला करते थे। एक बार गांधीजी ने उन्हें फिजी द्वीप जाने का आदेश दिया। वहां बड़ी संख्या में भारतीय प्रवासी रहते थे। उन्हींकी सहायता के लिए गांधीजी एन्ड्रयूज को वहां भेजना चाहते थे। भारतीयों ने ही फिजी द्वीप को समृद्ध वनाया था, लेकिन वहां के शासक अंग्रेज उनके साथ अच्छा बर्ताव नहीं करते थे।

इन दिनों गांधीजी बिहार के चम्पारन जिले में निलहे गोरों के विरुद्ध जांच कर रहे थे। बाबू ब्रजकिशोरप्रसाद और बाबू राजेन्द्रप्रसाद आदि अनेक स्थानीय व्यक्ति उनकी सहायता कर रहे थे। फिजी जाने से कुछ दिन पूर्व एण्ड्रयूज भी यहीं आ गये थे। यहां के लोग चाहते थे कि वह यहीं रहें, फिजी न जायं। उन्होंने एण्ड्रयूज से कहा भी, पर वह तो गांधीजी के परम भक्त थे। किसी भी तरह तैयार नहीं हुए। जब बहुत प्रार्थना की तो बोले, "गांधीजी कहें तो मैं रुक सकता हूं, नहीं तो मुझे जाना ही होगा।"

अब ब्रजकिशोरबाबू ने गांधीजी से अनुरोध किया कि वह श्री एण्ड्रयूज को फिजी न भेजें।

गांधीजी बोले, "बने हुए कार्यक्रम को तोड़ना ठीक नहीं है। एण्ड्रयूज को फिजी जाना ही चाहिए।"

ब्रजकिशोरबाबू ने उनसे फिर अनुरोध किया, लेकिन ये लोग जितना ही जोर देते, गांधीजी उतने ही कड़े पड़ते। जब ये लोग किसी भी तरह नहीं माने तो उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा, "मैं जानता हूं कि तुम लोगों के मन में डर घुसा हुआ है। इसीलिए तुम लोग मेरी मदद के वास्ते एण्ड्रयूज को रोक रखना चाहते हो। वह अंग्रेज़ हैं न। तुम लोग उनकी ओट में काम करोगे, क्योंकि तुम्हें विश्वास है कि अंग्रेजी सरकार होने की वजह से कुछ-न-कुछ मुरव्वत तो मिल ही सकती है। इसके अलावा निलहे भी अंग्रेज हैं। उनसे मिलने में भी तुम लोग एण्ड्रयूज साहब की ओट लोगे। यही बात है न? अब तो मैं एण्ड्रयूज को जरूर फिजी भेजूंगा। तुम लोगों को अपने मन से अंग्रेज़ों का डर निकाल देना होगा।"

: ४५ :

मेरी फीस देनी होगी

गांधीजी लाहौर में लोक सेवक संघ (सर्वेन्ट्स ग्राफ पीपल्स सोसाइटी) के कार्यालय में ठहरे हुए थे। वह अभी सिंध की यात्रा से आ रहे थे। उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा नहीं था। यह सूचना वहां के एक प्रख्यात डाक्टर को मिली। वह उन्हें देखने के लिए आये। बोले, "महात्माजी, मैं आपकी डाक्टरी जांच करना चाहता हूं।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "ठीक है, आप जांच कर सकते हैं, लेकिन मैं ऐसा बीमार नहीं हूं।"

डाक्टर ने विनम्र स्वर में कहा, "लेकिन जबतक आपकी जांच न कर ली जाय तबतक तसल्ली कैसे हो सकती है ?"

गांधीजी ने कहा, "जब तसल्ली ही करनी है, तो ठीक है। लेकिन मेरी फीस देनी होगी। उसके बिना मैं किसीको अपनी जांच करने की अनुमति नहीं दे सकता। इतने मुलाकाती राह देख रहे हैं। आपके लिए मुफ्त समय कैसे निकालूं ?"

डाक्टर ने चुपचाप अपनी जेब से सोलह रुपये निकाले और गांधीजी के सामने रख दिये।

मरूंगा तबतक गिनाता ही रहूंगा

यरवदा-जेल में एक दिन गांधीजी ने रणछोड़दास पटवारी को लम्बा पत्र लिखवाया। उन्होंने अट्ठासी सवाल किये थे। सभीके जवाब उन्होंने लिखवाये। यदि और कोई होता तो शायद ही इतने धीरज से उनका पत्र पढ़ता और जवाब देता, क्योंकि वे प्रश्न बड़े अटपटे और उनकी मान्यताओं का विरोध करनेवाले थे, परन्तु गांधीजी तो उपकार-कर्ता को जीवन-भर नहीं भूलते थे। पटवारीजी कभी आड़े वक्त उनके काम आये थे।

वल्लभभाई ने कहा, "यह आड़ा वक्त आप कबतक गिनाते रहेंगे! अब तो ये सीधे वक्त भी काम आनेवाले नहीं हैं।"

गांधीजी बोले, "मैं तो मरूंगा तबतक गिनाता ही रहूंगा।"

पत्र के आरम्भ में उन्होंने 'मुरब्बी रणछोड़दासभाई' कह-कर संबोधित किया और हस्ताक्षर के स्थान पर 'मोहनदास के प्रणाम' लिखे।

महादेवभाई ने पूछा, "यह आपसे कितने बड़े हैं?"

गांधीजी बोले, "सात-आठ वर्ष बड़े तो होंगे ही। मैंने सदा उन्हें बड़ा भाई ही माना है। उन्होंने तब पांच हजार रुपये उधार न दिये होते तो मैं बम्बई नहीं जा सकता था और विलायत भी नहीं जा सकता था। इस बात में मदद देनेवालों में ये भी एक थे। और जब मैं मैट्रिकुलेशन की परीक्षा देने गया था तब इन्हीं

के भाई ने मुझे ठहराया था। उस समय के रिवाज के अनुसार उन्होंने और भी मदद देने को कहा था।"

: ४७ :

मुझे पुण्य का काम करने का अवसर दिया

उन दिनों गांधीजी यरवदा-जेल में थे। उन्होंने अपने लिए कपड़े सीने का काम मांग लिया। वह तो कर्मयोगी थे। खाली कैसे बैठ सकते थे। एक दिन जेल के एक प्रमुख अधिकारी उनसे मिलने आये। गांधीजी बैठे सूत कात रहे थे। वहीं तक वह सज्जन जूता पहने चले आये। उन्होंने गांधीजी से कुशल समाचार पूछे। और भी कुछ प्रश्न पूछे। गांधीजी ने सदा की भांति विनोद-भरे स्वर में सबका जवाब दिया। थोड़ी देर बाद वह अधिकारी चले गये। उसके बाद गांधीजी भी उठे और एक बालटी में पानी भर-कर ले आये। जहां वह अधिकारी जूते पहनकर बैठे थे उस स्थान को उन्होंने अच्छी तरह से धोया और साफ किया।

उनके एक साथी ने पूछा, "बापू, यह क्या कर रहे हैं?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "यह मेरे बैठने-उठने का स्थान है। क्या मैं इसे साफ न रखूं?"

साथी ने कहा, "लेकिन गन्दा किसने किया है?"

गांधीजी बोले, "तुमने देखा नहीं, वह अधिकारी जूते पहने यहांतक चले आये थे। इसीलिए मैं साफ कर रहा हूं।"

साथी ने पूछा, "आपने उनसे कहा क्यों नहीं ? आप यहां एक तख्ती लगवा दीजिये कि जूते बाहर उतारकर ही अन्दर आवें।"

गांधीजी बोले, "बोर्ड लगाने की क्या जरूरत है? यह बात तो सबको समझ लेनी चाहिए। खैर, बहुत दिनों के बाद आज हाथ से सफाई करने का मौका आया है। मुझे तो उन अधिकारी का आभार ही मानना चाहिए कि उन्होंने मुझे ऐसा पुण्य का काम करने का अवसर दिया।"

: ४८ :

इतनी रोशनी में मैं लिख सकता हूं

नमक-सत्याग्रह की सुप्रसिद्ध यात्रा 'दाण्डी-कूच' के नाम से जानी जाती है। यह गांव सूरत जिले में समुद्र के किनारे स्थित है। वहीं पर गांधीजी ने नमक कानून तोड़कर सत्याग्रह करने का निश्चय किया। साबरमती-आश्रम से वह अपने साथियों को लेकर पैदल ही इस यात्रा पर रवाना हुए। उस समय उनकी उम्र ६१ वर्ष की थी। परन्तु उनके उत्साह की कोई सीमा नहीं थी। नौजवानों को भी थकानेवाली चाल से वह चलते थे।

कार्यक्रम के अनुसार यात्रा पूरी करने के बाद वह किसी गांव में पड़ाव डालते। हजारों लोग उनकी राह देखते बैठे रहते। वातावरण 'गांधीजी की जय' के नारों से गूंज उठता।

उस दिन भी ऐसा ही हुआ। लोगों को उन्होंने सत्याग्रह का रहस्य समझाया। वे लोग चले गये। वातावरण शान्त होने लगा। उन्होंने प्रार्थना की और फिर खुले आकाश के नीचे लेट गये। लेटने के तुरन्त बाद ही उन्हें गहरी नींद आ गई। स्वयं-सेवक भी धीरे-धीरे सो गये। चारों ओर मौन था और धवल चांदनी धरती पर बिखरी हुई थी। उनके बिस्तर के पास एक लालटेन जल रही थी। प्रकाश वहुत धीमा था।

कोई दो बजे होंगे कि गांधीजी सहसा जाग उठे। काम बहुत था। उन्होंने लालटेन की बत्ती थोड़ी ऊंची की और लिखने के लिए बैठ गये। कुछ ही क्षण बाद लालटेन का तेल चुक गया और वह बुझ गई। गांधीजी उसी तरह लिखते रहे। तभी एक स्वयं-सेवक की आंखें खुल गई। देखा, गांधीजी चन्द्रमा के प्रकाश में बैठे लिख रहे हैं। उनके पास आकर पूछा, "वापू, इतने प्रकाश में आप लिख सकते हैं ?"

गांधीजी ने हँसकर कहा, "हां, लिख तो सकता हूं, लेकिन लिखा हुआ पढ़ नहीं सकता।"

स्वयंसेवक ने फिर कहा, "आपने हममें से किसीको जगाया क्यों नहीं ? वह लालटेन जला लाता।"

गांधीजी बोले, "सारे स्वयंसेवक थककर चूर हो गये हैं। देखो न, कैसी गहरी नींद में सो रहे हैं! मैं किसे जगाता और फिर इतनी रोशनी में मैं लिख तो सकता ही हूं।"

मेरा सारा जीवन छोटी-छोटी बातों से बना है

एक समय एक विधवा स्त्री आश्रम में आकर रहने लगी थी। उसके साथ नौ वर्ष का उसका एक बेटा भी था। वह बड़ा तेजस्वी था। उसे आश्रम की बुनियादी शाला के छात्रावास में भेज दिया गया। उसने इस शर्त पर वहां जाना स्वीकार किया कि गांधीजी उसके छात्रावास में उससे मिलने आयंगे।

एक दिन गांधीजी अचानक उससे मिलने पहुंच गये। ज्योंही कमरे में घुसे उन्होंने पाया कि कमरे के बीच में चटाई पर कलम-दवात पड़ी हुई है। दवात मैली-सी है और कलम की निब खुरदरी है।

उन्होंने रजाई देखी तो उसमें रुई जगह-जगह इकट्ठी हो गई थी, चादर फट गई थी और उसकी सिलाई भी बड़े बेढंगेपन से हुई थी। कुछ लड़कों के पास सर्दी के लिए पर्याप्त कपड़े तक नहीं थे।

गांधीजी केवल पांच मिनट के लिए वहां आये थे, लेकिन यह सब देखते हुए उन्हें पचपन मिनट लग गये। उन्होंने एक नोट में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये, "फटी हुई चादरों में पैबन्द लगाने चाहिए थे या फिर दुहरा करके उनकी रजाई बना देनी चाहिए थी। जब मैं ट्रांसवाल की जेल में था तब मैंने कम्बलों की गुदड़ी और रजाई बनाने का बहुत काम किया था।

ऐसे कम्बल गर्म और टिकाऊ होते हैं। फटे हुए कपड़ों को धोकर और तह करके रखना चाहिए। ये पेवन्द लगाने के काम आ सकते हैं।

"ये सब बातें आपको तुच्छ दिखाई दे सकती हैं, परन्तु बड़ी बातें छोटी-छोटी बातों से ही बनती हैं। मेरा सारा जीवन छोटी-छोटी बातों से ही बना है। जिस हद तक हमने अपने बच्चों को ये छोटी-छोटी बातें सिखाने में उपेक्षा की है उसी हद तक हम असफल हुए हैं। मेरी राय में स्वच्छता, सुघड़ता और शुद्धता की दृष्टि नई तालीम का हार्द है।"

: ५० :

जब प्रेम उठानेवाला होता है...

यरवदा-जेल में श्री गोविन्द राघव ने गांधीजी को एक पत्र लिखा था। उसमें उन्होंने एक बिशप की छोटी-सी कहानी भी लिखी थी। वह बिशप एक पहाड़ी पर चढ़ रहा था। उसी समय एक छः-सात वर्ष की लड़की भी अपने दो साल के भाई को कंधे पर बिठाकर चढ़ रही थी और हांप रही थी।

यह देखकर बिशप ने उससे कहा, "अरे, यह लड़का तो तेरे लिए बहुत भारी है।"

लड़की ने तुरन्त जवाब दिया, "ज़रा भी भारी नहीं। यह तो मेरा भाई है।"

यह कहानी पढ़कर गांधीजी ने गोविन्द राघव को लिखा, "आपका प्रेमपूर्ण पत्र मिला। कितना महान विचार है! यह भारी नहीं, यह तो मेरा भाई है। भारी-से-भारी चीज पंख जैसी हल्की बन जाती है जब प्रेम उसे उठानेवाला होता है।"

: ५१ :

सरकारी वक्त या वस्तु प्रजा की ही है

गांधीजी यरवदा-जेल में थे। श्री फूलचन्द का वीसापुर से पत्र आया। उसमें से जेलवालों ने तेरह पंक्तियां टाइपराइटर की सहायता से मिटा डाली थीं। वे बिलकुल नहीं पढ़ी जाती थीं।

इस पत्र का उत्तर देते हुए गांधीजी ने उन्हें लिखा, "हमें इसका दुख नहीं मानना चाहिए। कैदी हैं, इसलिए जैसे वे रखें, रहना चाहिए। ऐसा भी समय था, जब न कैदियों को पत्र लिखने देते थे, न पढ़ने देते थे, न पूरा खाने को देते थे, चौबीसों घंटे बेड़ियां पहनाते और घास पर सुलाते थे। इसलिए हमें तो जो मिल जाय उसे ईश्वर की कृपा ही समझना चाहिए, लेकिन स्वाभिमान नष्ट हो तो वहां हम प्राण भी दे दें।"

कुछ और बातों की चर्चा करने के बाद लिखा, "एक गम्भीर भूल जो हम सब करते हैं वह यह है कि हम न जाने क्यों, यह मानकर कि सरकारी समय या चीज हमारी नहीं है, उसे बरबाद करते हैं। ज़रा-सा विचार करने पर हमें तुरन्त मालूम हो

जायगा कि सरकारी वक्त या वस्तु प्रजा की है। अभी सरकार के कब्जे में है; इसलिए उसे बरबाद कर देंगे तो यही कहा जायगा कि प्रजा का धन और वक्त बरबाद किया गया है। इसलिए हमारे हाथ में जो कुछ आये, उसका हम सदुपयोग करें। जेलों में हम जो भी आमदनी करते हैं वह भी प्रजा के धन में वृद्धि करने के बराबर ही है। सरकार के विदेशी होने से इस विचारधारा में कोई फर्क नहीं पड़ता।"

: ५२ :

क्या, तुम्हें भगवान पर श्रद्धा नहीं है ?

हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए गांधीजी ने अपना सुविख्यात इक्कीस दिन का उपवास दिल्ली में मौलाना मोहम्मद अली के घर पर आरम्भ किया था। बाद में जब उनकी अवस्था बिगड़ने लगी तो वह डा० अन्सारी की कोठी पर चले गये। वह दिन-पर-दिन दुर्बल होते जा रहे थे। डाक्टरों का आदेश था कि वह पूर्ण विश्राम करें।

उस दिन उपवास का तेरहवां दिन था। एक ग्रामीण दम्पति उनके दर्शन करने के लिए वहां आ पहुंचा। बाहर के द्वार पर हजारों लोगों की भीड़ लगी हुई थी। लेकिन वे पति-पत्नी स्वयं-सेवकों का घेरा तोड़कर भीतर पहुंचने में सफल हो गये। अन्दर सीढ़ियों पर दीनबन्धु एण्ड्रयूज चौकीदारी कर रहे थे। वह बहुत

दृढ़ थे। उनको देखते ही बोले, "क्यों भाई, ऐसे क्यों घुस आये? तुम लोगों का ऊपर जाना और गांधीजी को परेशान करना ठीक नहीं है। वह इस समय बहुत कमजोर हो गये हैं। उन्हें पूरा आराम चाहिए। इसलिए उनके स्वास्थ्य के लिए दूर से ही भगवान से प्रार्थना करो और शान्तिपूर्वक यहां से चले जाओ।"

यह सब सुनकर भी वे ग्रामीण पति-पत्नी वहां से टस-से-मस न हुए। यात्रा के कारण वे बहुत थक गये थे। धूल से भी अटे हुए थे। उनके चेहरों को देखकर लगता था कि वे बहुत परेशान हैं। स्त्री के हाथ में एक लोटा था, जिसका मुंह उसने पत्तल से ढंक रखा था।

बात यह थी कि गांव में उनका इकलौता बेटा बीमार पड़ा था। डाक्टर के भरसक प्रयत्नों के बावजूद उसके स्वास्थ्य में कुछ सुधार नहीं हो रहा था, बल्कि दिन-प्रतिदिन हालत बिगड़ती जा रही थी। तब सहसा उनके मन में विचार आया कि गांव के कुएं का पानी लेकर उससे गांधीजी के चरण पखारे जायं और वह चरणामृत बच्चे को पिला दिया जाय तो वह ठीक हो जायगा। इसी विश्वास से उनकी आंखें चमक रही थीं। उन्होंने एण्ड्रयूज को सारी बात बताकर उनसे प्रार्थना कि वह केवल उन्हें एक मिनट के लिए गांधीजी के पास जाने दें, ताकि वे अपना उद्देश्य पूरा कर सकें।

लेकिन एण्ड्रयूज ने तो अपना कलेजा पत्थर का बना लिया था। डाक्टरों की आज्ञा का दृढ़ता से पालन कराने को वह तुले हुए थे। उन्होंने साफ कह दिया, "तुम्हें महात्माजी के पास किसी भी कीमत पर नहीं जाने दिया जायगा।"

दोनों पक्ष अपनी-अपनी बात पर अड़े हुए थे। कोई भी झुकने को तैयार नहीं था। पति-पत्नी सीढ़ियों के नीचे बैठ गये और दृढ़ स्वर में बोले, "हम गांधीजी से बिना मिले नहीं लौटेंगे।"

तब एक सज्जन ने सुझाव दिया कि ये सारी बातें गांधीजी को बता दी जायं और यदि वह कहें कि किसीसे मिलना उनके लिए संभव नहीं है, तो इन लोगों को चुपचाप लौट जाना चाहिए।

ग्रामीण-दम्पत्ति इसके लिए राजी हो गये। एण्ड्रयूज भीतर चले गये। उन्हें पूरा विश्वास था कि गांधीजी अपने पैर धोने और उसका पानी औषधि के रूप में पिलाने की कभी अनुमति नहीं देंगे। लेकिन सारी कथा सुनकर उन्होंने श्री एण्ड्रयूज को संकेत किया कि उस दम्पति को भीतर आने दिया जाय।

पति-पत्नी अन्दर जाकर गांधीजी के सामने बैठ गये। गांधीजी ने धीरे-धीरे बहुत धीमी आवाज में उन्हें समझाते हुए कहा, "क्या तुम्हें भगवान पर श्रद्धा नहीं है? यदि है तो उस श्रद्धा को एक साधारण आदमी पर उतारकर भगवान का अपमान क्यों करते हो? मेरे पैर धोकर वह गंदा पानी दवा के रूप में पिलाया जाय, यह मेरे लिए ही नहीं, तुम्हारे लिए भी अपमान की बात है। क्या तुम्हें स्वास्थ्य और सफाई की इतनी-सी बात भी मालूम नहीं?"

लगभग दस मिनट तक गांधीजी उन्हें इसी भांति समझाते रहे और अंत में उनके लोटे का पानी गिरवा देने में सफल हो

गये। उन्होंने कहा, "भगवान में श्रद्धा रखो और किसी अच्छे डाक्टर को अपने साथ लेजाकर अपने लड़के को दिखाओ।"

उनकी बात मानकर वे पति-पत्नी दोनों संतुष्ट होकर वहां से लौटे। उन्हें इस बात का गर्व था कि ऐसी हालत में भी गांधीजी ने उनसे बातें कीं। उन्हें शिक्षा दी। अब वे कभी ऐसे अंधविश्वास के पीछे नहीं पड़ेंगे।

: ५३ :

आपको मेरी भी रिपोर्ट करनी चाहिए

गांधीजी जब पहली बार यरवदा-जेल में थे तब वहां का एक गोरा वार्डर उन्हें सन्देह की दृष्टि से देखता था। वह मानता था कि प्रत्येक कैदी पर शक करना उसका कर्त्तव्य है और गांधीजी मानते थे कि बिना सुपरिन्टेन्डेन्ट की जानकारी के कोई काम नहीं करना चाहिए। उन्होंने उनसे कह दिया था, "मेरे बाड़े के सामने से जानेवाला कोई कैदी यदि मुझे नमस्कार करेगा तो उत्तर में मैं भी उसे नमस्कार करूंगा और मेरे खाने के बाद जो खुराक बचती है, वह सब मैं अपनी देखरेख करनेवाले कैदी वार्डर को दे दूंगा।"

गोरा वार्डर इस सबके बारे में कुछ नहीं जानता था। एक बार उसीके सामने किसी कैदी ने गांधीजी को नमस्कार किया। उन्होंने भी प्रत्युत्तर में उसे नमस्कार किया। गोरे वार्डर ने दोनों

को ऐसा करते देखा, परन्तु टिकट अकेले उस कैदी से ही लिया। इसका अर्थ यह था कि उस बेचारे को अधिकारी के सामने पेश किया जायगा।"

गांधीजी ने तुरंत उस गोरे वार्डर से कहा, "आपको मेरी भी रिपोर्ट करनी चाहिए, क्योंकि मैं भी उस कैदी के समान अपराधी हूं।"

उसने उपेक्षा से उत्तर दिया, "मुझे अपना कर्त्तव्य पालन करना है।"

गांधीजी जब सुपरिटेन्डेन्ट से मिले तो उन्होंने उस कैदी के नमस्कार करने और प्रत्युत्तर में अपने नमस्कार करने की ही बात कही। गोरे वार्डर के व्यवहार की बिलकुल चर्चा नहीं की।

यह देखकर वह गोरा वार्डर कुछ चकित हुआ और प्रभावित भी हुआ। शायद वह समझ गया कि गांधीजी के दिल में उसके प्रति कोई दुर्भावना नहीं है। बस उस दिन से उसने उनपर सन्देह करना छोड़ दिया और धीरे-धीरे वह उनके प्रति मित्रभाव प्रकट करने लगा।

: ५४ :

मुझे इन प्रहारों से हर्ष हुआ

असहयोग आन्दोलन के प्रथम चरण में अकस्मात एक दिन चौरीचौरा में भयानक दुर्घटना घट गई। अहिंसक होने के

संवंध में देशवासियों के प्रति गांधीजी का विश्वास हिल गया। अपनी भूल वार-बार स्वीकार करके उन्होंने सत्याग्रह स्थगित कर दिया।

उस समय दिल्ली में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की वैठक में वक्ताओं ने उन्हें आड़े हाथों लिया। खूब कोलाहल मचा। गांधीजी के जीवन में भारत में ऐसे आन्तरिक विरोध का वह पहला ही अवसर था। श्री हरिभाऊ उपाध्याय को यह बहुत बुरा लगा। उन्होंने गांधीजी से कहा, "बापू, अव की तो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीवाले आपसे बुरी तरह पेश आये। इससे मुझे वड़ी चोट लगी।"

गांधीजी ने हँसते हुए उत्तर दिया, "नहीं, मुझे तो उन लोगों का विरोध वहुत अच्छा लगा। उनकी निर्भयता देखकर विश्वास हो गया कि जो लोग मुझ जैसे का खुल्लमखुला विरोध कर सकते हैं, वे दुनिया में किससे डरेंगे ? किसीका विरोध करते हुए नहीं डरेंगे। अत: मुझे इन प्रहारों से हर्ष हुआ।"

: ५५ :

विना कारण किसीकी निन्दा करना मेरा काम नहीं

जिस समय गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के विरुद्ध सत्याग्रह कर रहे थे उसी समय एक वार भारत के प्रसिद्ध नेता

गोपालकृष्ण गोखले भी वहां गये थे। उनको अपने बीच में पाकर वहां के भारतवासी उनका सम्मान करने के लिए उतावले हो उठे। गांधीजी भी चाहते थे कि गोखले का स्वागत-सम्मान उनके यश के अनुरूप ही किया जाय, लेकिन साथ ही वह यह भी चाहते थे कि यह काम सब एक साथ मिलकर करें। इसलिए उन्होंने यह व्यवस्था की कि गोखले को दिये जानेवाले सभी मानपत्र एक मुख्य समारोह में दिये जायं।

गोखले की सुख-सुविधा और देख-रेख का भार सब गांधीजी पर ही था। उनसे बिना पूछे गोखले कुछ भी न कर सकते थे। इसी बीच एक संन्यासी गोखले से मिलने आये। बातों-ही-बातों में उन्होंने उन्हें इस बात के लिए मना लिया कि वह जोहानिसबर्ग के हिन्दुओं की एक सभा में दस मिनट के लिए उपस्थित रहेंगे। दूसरे दिन गांधीजी को इस घटना की सूचना मिली। उन्हें इस बात की सूचना भी मिली कि संन्यासी महाराज ने इस बात का यह अर्थ लगाया है कि गोखले ने हिन्दुओं का मानपत्र अलग से लेना स्वीकार कर लिया है। यदि ऐसा होता है तो उनकी सारी योजना व्यर्थ हो जायगी। भारतवासी एकरूप न होकर अलग-अलग जाति और अलग-अलग धर्म के रूप में श्री गोखले का सम्मान करेंगे।

वह तुरन्त गोखले के पास गये। पूछा, "क्या आपने स्वामीजी को ऐसा आश्वासन दिया है कि आप हिन्दुओं की ओर से अलग मानपत्र लेंगे?"

गोखले ने उत्तर दिया, "नहीं, मैंने ऐसा कुछ नहीं किया। उन्होंने बहुत आग्रह किया था, इसलिए मैंने हिन्दुओं की सभा में

केवल दस मिनट के लिए जाना स्वीकार कर लिया है।"

गांधीजी ने उन्हें वास्तविक स्थिति के बारे में जानकारी दी। स्वामीजी का परिचय दिया। सवकुछ सुन लेने के वाद गोखले वोले, "गांधी, तुमने पहले ही मुझे इस आदमी के बारे में सावधान क्यों नहीं कर दिया ?"

गांधीजी ने हँसकर उत्तर दिया, "अनजान आदमी को इस प्रकार आश्वासन देने से पहले क्या आपको मुझसे नहीं पूछना चाहिए था ? वचन आपने भंग किया है, मैंने नहीं।"

इसपर गोखले ने भौहें चढ़ाकर पूछा, "और मेरे मंत्री की हैसियत से क्या तुम्हारा यह कर्त्तव्य नहीं था कि उस व्यक्ति से मिलने के पहले मुझे चेतावनी दे देते ?"

गांधीजी ने कहा, "मेरा काम विना कारण किसीकी निन्दा करना नहीं है।"

यह सुनकर गोखले वहुत प्रसन्न हुए। वोले, "वहुत अच्छा, वहुत अच्छा। मैं जानता हूं, तुम वहुत होशियार हो। लेकिन अब अगर तुम्हें ऐसा लगता है कि मुझसे भूल हुई है तो तुम उसे सुधार लो।"

मुझे बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ है

गांधीजी उन दिनों दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के विरुद्ध सत्याग्रह आन्दोलन चला रहे थे। उस समय तक वह महात्मा नहीं बने थे, लेकिन नाम उनका काफी फैल गया था। उन्हीं दिनों वह एक शिष्टमण्डल के साथ लन्दन गये।

लन्दन में भारत के बहुत-से नवयुवक पढ़ते थे। उनमें से कुछ खतरनाक भी समझे जाते थे। वे भारत की स्वतन्त्रता की बात करते थे। उनकी एक सभा थी। वीर सावरकर उसके प्रधान थे। जिस समय गांधीजी लन्दन पहुंचे उसी समय भारत के कई चोटी के नेता वहां थे। इस बात का लाभ उठाकर उन युवकों ने एक सभा करने का विचार किया। वे युवक सारे ब्रिटेन में फैले हुए थे। इस काम के लिए वे सब लन्दन में इकट्ठे हुए। सभा का कार्य-क्रम बहुत सीधा-सा था। पहले भोज, फिर भाषण। उसके लिए एक होटल भी निश्चित कर लिया गया।

यह सव तो ठीक हो गया, लेकिन सभा की अध्यक्षता करने को अभी कोई नहीं मिला था। भारत के सभी नेताओं ने मना कर दिया था। अन्त में गांधीजी इसके लिए तैयार हो गये, परन्तु उनकी एक शर्त थी। उनका आग्रह था कि भोज में पूर्णतया भारतीय पद्धति के शाकाहार को स्थान दिया जायगा। युवकों ने उनके इस आग्रह को स्वीकार कर लिया। उन्होंने एक हाल किराए पर लिया। सव आवश्यक वस्तुएं खरीदीं और भारतीय

पाक-शास्त्र के अनुसार तरह-तरह के व्यंजन बनाने का निश्चय किया।

फिर शाम को साढ़े सात बजे खाना परोसा जा सके, इस दृष्टि से वे सब काम में जुट गये। किसीने बर्तन संभाले, किसीने चूल्हा, कोई तरकारी काटने पर लगा तो कोई पकवान बनाने पर। वे सब भारत के अलग-अलग प्रदेशों के रहनेवाले थे। एक-दूसरे को अच्छी तरह पहचानते भी नहीं थे। दोपहर के समय एक प्रसन्नचित्त, क्षीणकाय और नाटा-सा व्यक्ति वहां आया और काम में मदद देने लगा। उसने स्वयं ही थालियां मांजने और तरकारी छीलने का काम संभाल लिया।

कई घंटे बीत गये। सन्ध्या आ गई, लेकिन वह बराबर काम करता रहा। तभी सभा के उपप्रधान श्री ऐयर वहां आये। सहसा उनकी दृष्टि उस क्षीणकाय भारतीय पर पड़ी। वह आंखें फाड़े उसे देखते रह गये। उनके आस-पास जो युवक थे, वे यह देखकर चौंक उठे। एक ने साहस करके पूछा, "क्या बात है?"

श्री ऐयर ने कहा, "उस आदमी को पहचानते हो?"

युवक ने कहा, "वह कौन है?"

श्री ऐयर बोले, "श्री गांधी।"

यह सुनकर वे सारे युवक चकित रह गये। दक्षिण अफ्रीका के प्रसिद्ध पुरुप और आज के इस समारोह के अध्यक्ष स्वयं श्रीगांधी एक अनिमंत्रित सहायक के रूप में उनके साथ काम कर रहे हैं, बर्तन मांज रहे हैं! जिस महापुरुप के बारे में उन्होंने इतना सुन रखा था, उसकी यह असाधारण विनम्रता और निरभिमानता देखकर वे दंग रह गये।

उन लोगों ने गांधीजी को रोकने की बहुत चेष्टा की, परन्तु वह नहीं माने, यहांतक कि थालियां लगाने और खाना परोसने के काम में भी सबकी मदद की। फिर भोज के पश्चात उन्होंने सभा का अध्यक्ष बनकर भाषण भी दिया। बोले, "यह देखकर कि आप लन्दन-निवासी भारतीय विद्यार्थी सम्पन्न माता-पिता की सन्तान होते हुए भी अपने देशवासियों के लिए इस प्रकार का हल्का काम करने में ओछापन अनुभव नहीं करते, मुझे बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ है। मैं इसमें स्वदेश का उज्ज्वल भविष्य देख सकता हूं।"

: ५७ :

अंग्रेज़ भारत में सेवक बनकर रहें

अपने इंग्लैण्ड-प्रवास में गांधीजी ऑक्सफोर्ड गये थे। वहां वह डा० लिण्डसे के घर ठहरे थे। एक दिन बातों-ही-बातों में जलियांवाला बाग-काण्ड की चर्चा आ गई। प्रसंगवश गांधीजी ने उस घटना का उल्लेख भी किया, जिसमें जनरल डायर ने लोगों को पेट के बल चलने पर विवश किया था। वर्णन इतना मार्मिक था कि सुननेवाले कांप उठे।

गांधीजी जब बोल चुके तब श्रीमती लिण्डसे उनके पास आईं और विनम्र स्वर में बोलीं, "यदि आप इसे योग्य प्रायश्चित्त समझें तो हम पचास बार पेट के बल चलने को तैयार हैं।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "नहीं, ऐसा करने की कोई जरूरत नहीं। मैं नहीं चाहता कि कोई ऐसा करे। अपनी इच्छा से मैं या कोई भी पचास बार पेट के बल चल सकता है, परन्तु यदि मैं किसी अंग्रेज लड़की को ऐसा करने के लिए मजबूर करूं तो वह मुझे लात मारेगी और उसका ऐसा करना उचित ही होगा। मैं तो बीभत्सता का एक उदाहरण देना चाहता था। इसका प्राय-श्चित्त यदि हो सकता है तो यही है कि अंग्रेज लोग भारत में मालिक बनकर नहीं, सेवक बनकर रहें।"

: ५८ :

लुटेरा इंग्लैण्ड संसार के लिए खतरा है

गोलमेज कांफ्रेंस के समय लन्दन में छोटे-बड़े अनेक व्यक्ति गांधीजी से मिलने के लिए आया करते थे। एक दिन उनसे कहा गया कि चार्ली चैपलिन उनसे मिलना चाहते हैं।

निर्दोष भाव से गांधीजी ने पूछा, "यह महापुरुष कौन हैं?"

अनेक वर्षों से उनका जीवन कुछ इस प्रकार का हो गया था कि अपने निश्चित काम के अतिरिक्त और कुछ जानने का अवसर ही उन्हें नहीं मिलता था, लेकिन जब उन्हें पता लगा कि चार्ली चैपलिन एक बहुत ही कुशल हास्य अभिनेता हैं और वह साधारण जनता में के ही व्यक्ति हैं, वह जनता के लिए ही

हैं और उन्होंने लाखों व्यक्तियों को हँसाया है तो उन्होंने एक स्थान पर उनसे मिलना स्वीकार कर लिया।

ठीक समय पर वह मिलने आये और अपने स्वभाव के अनुसार कार से कूदकर उतरे। गांधीजी ने उनके विषय में नहीं सुना था, पर शायद चार्ली चैपलिन ने उनके प्रिय चरखे के बारे में बहुत-कुछ सुन रखा था, क्योंकि ड्राइंगरूम में बैठने के पश्चात उन्होंने पहला प्रश्न किया, "गांधीजी, आप मशीनों का विरोध क्यों करते हैं ?"

इस प्रश्न से गांधीजी बहुत प्रसन्न हुए और विस्तार से बताते हुए बोले, "भारत के किसान छः महीने बेकार रहते हैं। इस काल में उनके पुराने घरेलू एवं सहायक धंधे को पुनरुज्जीवित किये बिना काम नहीं चल सकता।"

चार्ली चैपलिन ने कहा, "तब केवल कपड़े के विषय में ही यह बात है ?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "बेशक, प्रत्येक राष्ट्र को अन्न-वस्त्र तो स्वयं ही पैदा करना चाहिए। पहले हम यह सब कर लेते थे। अब आगे भी वैसा ही करना चाहते हैं। इंग्लैण्ड बहुत अधिक परिमाण में माल तैयार करता है। उसे खपाने के लिए ही उसे बाहर के बाजार ढूंढ़ने पड़ते हैं। हम इसे लूट कहते हैं। लुटेरा इंग्लैण्ड संसार के लिए खतरा है। इसलिए अब यदि भारत मशीनों का उपयोग स्वीकार कर ले और अपनी आवश्यकता से अधिक कपड़ा तैयार करे, तो वह लुटेरा होगा न, और लुटेरा भारत संसार के लिए कितना बड़ा खतरा साबित होगा।"

चार्ली चैपलिन ने आगे पूछा, "तो यह प्रश्न केवल भारत

तक ही सीमित है ? किन्तु मान लीजिये कि आपके भारत में रूस की-सी स्वतंत्रता हो और आप अपने बेकारों को दूसरा काम दे सकें तथा संपत्ति का बराबर बंटवारा हो जाय तब तो आप मशीनों का तिरस्कार नहीं करेंगे ? क्या आप यह नहीं मानेंगे कि मजदूरों के काम के घण्टे कम हों और उन्हें विश्राम के लिए अधिक फुर्सत मिले ?"

गांधीजी ने कहा, "अवश्य।"

: ५९ :

आत्मशुद्धि की लड़ाई में मनुष्य-प्रेम की वृद्धि होती है

गांधीजी गोलमेज परिषद में भाग लेने के लिए लन्दन गये थे। ब्रिटिश सरकार ने उनकी रक्षा के लिए गुप्त पुलिस के दो अधिकारियों को नियुक्त किया था। सामान्यतः खास-खास राजाओं की देखभाल के लिए ऐसे लोगों को नियुक्त किया जाता है। ये लोग मनुष्य के अवगुण देखने के आदी होते हैं, परन्तु अब उनका काम कुछ और ही हो गया। गांधीजी के सहवास से उनके मन में उनके प्रति प्रेम जाग्रत हो आया। वे बड़े स्नेह से उन्हें 'नन्हा पुरुष' कहते थे और सदा उनकी हर प्रकार की सेवा करने के लिए तैयार रहते थे। वे लोग गांधीजी के मेजबानों की भी स्वेच्छा से सहायता करने लगे थे।

गांधीजी जब भारत के लिए रवाना हुए, एक उच्च अधिकारी ने उनसे पूछा, "मैं आपकी और क्या सेवा कर सकता हूं ?"

गांधीजी ने नम्रता से कहा, "गुप्त पुलिस के इन दोनों व्यक्तियों को मेरे साथ ब्रिंडिसी तक यात्रा करने की आज्ञा दीजिये।"

अधिकारी ने पूछा, "ऐसा किसलिए ?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "ये लोग मेरे ही परिवार के हो गये हैं इसलिए।"

अधिकारी ने उनकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और वे दोनों सार्जेण्ट तबतक गांधीजी के साथ रहे जबतक उन्होंने यूरोप नहीं छोड़ा। उनके नाम थे—सार्जेण्ट एवन्स और सार्जेण्ट रोजर्स।

विदा के समय गांधीजी ने उन दोनों को हस्ताक्षरयुक्त अपने चित्र भेंट किये और कहा, "मैं यादगार के लिए आपको कुछ देना चाहता हूं। क्या चाहेंगे ?"

उन लोगों ने घड़ी लेने की इच्छा प्रकट की। गांधीजी जैसे ही बम्बई बन्दरगाह पर उतरे, उन्होंने इंग्लैण्ड में बनी हुई दो घड़ियां उन्हें भेज दीं। उनपर अंग्रेजी में लिखा था 'मोहनदास गांधी की ओर से सस्नेह भेंट।'

ये दोनों सार्जेण्ट जब भी अपने काम पर जाते थे तो उनकी जेबों में गांधीजी द्वारा भेजी गई घड़ियां रहती थीं। अपने पत्र 'नवजीवन' में गांधीजी ने उनके संबंध में लिखा, "गुप्त पुलिस के जिन अधिकारियों को मेरी देख-रेख का काम सौंपा गया था,

उनमें से दो तो, जिनसे मेरा गाढ़ परिचय हो गया था, मेरे अच्छे मित्र और सच्चे अंगरक्षक साबित हुए। उनका काम मेरी गुप्त हलचलों की देख-रेख रखना हो, ऐसा मुझे कभी महसूस नहीं हुआ। न तो उनका कोई ऐसा व्यवहार ही था, न मैंने कभी इस बात को जानने की कोशिश की। अगर उनका उपर्युक्त हेतु होता तो मुझे न आश्चर्य होता, न दुःख। ऐसा मेरा अन्दाज है कि वे मेरी प्रवृत्तियों की देख-रेख करनेवाले नहीं थे। मेरे प्रति उनका प्रेम इतना अधिक था कि मुझे ज़रा भी तकलीफ होती थी तो ये लोग जी-तोड़ मेहनत करते थे और मुझे आराम पहुंचाने में कोई कोर-क़सर नहीं करते थे। मेरे साथियों को इनकी मदद बड़ी कारगर साबित हुई। सामान वगैरा की चिन्ता ये पुलिस के अफसर ही करते थे। मेरे अनुरोध करने पर इन्हें मेरे साथ ब्रिंडिसी तक आने की इजाज़त मिल गई थी। ये लोग जब हमसे अलग हुए तो उन्हें भी बहुत दुःख हुआ और हमें भी। मनुष्य-प्रेम के ऐसे अनुभवों के लिए मैं धरती के इस कोने से उस कोने तक घूम सकता हूं।

"जहां आत्मशुद्धि की लड़ाई हो, जिसका आधार सत्य और अहिंसा हो, वहां ऐसे मनुष्य-प्रेम की वृद्धि ही होती है। इससे हमारे सत्याग्रह की शक्ति भी चौगुनी हो जाती है।"

मैं तुम्हारे साथ आधे रास्ते तक तो दौड़ सकता हूं

इंगलैंड-प्रवास के समय एक व्यक्ति गांधीजी से मिलने आया। वह जल-सेना में काम करता था और मीराबहन के पिताजी को जानता था। मीराबहन उसके भूतपूर्व एडमिरल की पुत्री हैं, इस ख्याल से उनपर वह अपना विशेष अधिकार मानता था। उसने उनसे कहा, "मैं इक्कीस वर्ष तक नौ-सेना में था। मैंने तुम्हारे पिताजी की मातहती में नौकरी की है। मेरा दामाद गांधीजी के लिए बकरी का दूध भेजता है। क्या वह मुझे अपने हस्ताक्षर देने की कृपा न करेंगे ?"

उसकी प्रार्थना व्यर्थ न गई। गांधीजी ने उसे अन्दर बुलाया। अपनी कथा सुनाकर वह बोला, "साहब, मैं आपके और आपके उद्देश्य के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएं प्रकट करता हूं। मैंने खूब दुनिया देखी है। महायुद्ध में मैंने नौकरी की है। जगह-जगह गया हूं। ठिठुरते पैरों से गेलीपोली से सालेनिया के लिए कूच का हुक्म हुआ था। तब अकथनीय कष्टों का सामना करना पड़ा था। अब आगामी युद्ध में नौकरी करने की अपेक्षा मैं जेल जाना पसन्द करूंगा। वास्तव में यह एक बहुत ही भयंकर कार्य है। मैं तो आपके लिए लड़ना अधिक पसंद करता हूं। आपको अपने उद्देश्य में सफलता मिले, यही मैं चाहता हूं।"

वह अपने साथ अपनी लड़की और दामाद का फोटो भी

लाया था। हस्ताक्षर लेकर वह जाने की तैयारी में ही था कि गांधीजी ने उससे पूछा, "तुम्हारे कितने बच्चे हैं ?"

उसने उत्तर दिया, "आठ—चार लड़के, चार लड़कियां।"

गांधीजी बोले, "मेरे केवल चार लड़के हैं, इसलिए मैं तुम्हारे साथ आधे रास्ते तक तो दौड़ ही सकता हूं।"

: ६१ :

यह काम सौंपकर आपने मुझपर उपकार किया है

गांधीजी जब पहली बार दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे तब राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ता में हो रहा था। वह भी वहां गये। अधिवेशन में अभी एक-दो दिन की देर थी। उन्होंने निश्चय किया कि यदि स्वीकार हो सके तो कांग्रेस के दफ्तर में वह कुछ सेवा करें और अनुभव प्राप्त करें।

उन दिनों श्री भूपेन्द्रनाथ बसु और श्री घोषाल कांग्रेस के मंत्री थे। गांधीजी पहले श्री भूपेन्द्रनाथ बसु के पास पहुंचे और उनसे कोई काम मांगा। उन्होंने गांधीजी की ओर देखकर उत्तर दिया, "मेरे पास तो कोई काम नहीं है, पर शायद श्री घोषाल आपको कोई काम दे सकें। उनके पास जाइये।"

गांधीजी घोषालबाबू के पास गये। उन्होंने भी उन्हें ध्यान से देखा, फिर मुस्कराये और बोले, "मेरे पास क्लर्क का काम

है। करोगे ?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "अवश्य करूंगा। मेरी शक्ति से बाहर न हो, ऐसा हर काम करने के लिए मैं आपके पास आया हूं।"

"नवयुवक, सच्चा सेवा-भाव इसीको कहते हैं", और पास खड़े स्वयंसेवकों की ओर देखकर वह बोले, "सुनते हो, यह युवक क्या कह रहा है ?"

फिर गांधीजी की ओर मुड़कर कहा, "तो देखिये यह है पत्रों का ढेर और यह मेरे सामने पड़ी है कुर्सी। इसपर आप बैठिये। आप देखते हैं न कि मेरे पास सैकड़ों आदमी आते हैं। मैं उनसे मिलूं या उन बेकार पत्र लिखनेवालों को उनके पत्रों का उत्तर दूं? मेरे पास ऐसे क्लर्क भी तो नहीं हैं, जिनसे यह काम ले सकूं। पत्रों में से बहुतों में काम की एक बात भी न होगी। पर आप सबको देख जाइये। जिसकी पहुंच भेजना उचित समझें, उसकी पहुंच भेज दीजिये और जिनके उत्तर के बारे में मुझसे पूछना जरूरी समझें, पूछ लीजिये।" श्री घोषाल गांधीजी को पहचानते नहीं थे। नामधाम जानने का काम तो उन्होंने बाद में किया। पत्रों का जवाब देना बहुत कठिन नहीं था। गांधीजी ने उस सारे ढेर को तुरन्त निपटा दिया। घोषालबाबू खुश हुए। उनका स्वभाव बातूनी था। बातों में बहुत-सा समय बिता देते थे। जब उन्हें गांधीजी का परिचय मालूम हुआ तो वह उन्हें क्लर्क का काम सौंपने के लिए बहुत लज्जित हुए। गांधीजी ने कहा, "कहां आप और कहां मैं ! आप कांग्रेस के पुराने सेवक हैं, मेरे गुरुजन हैं। मैं एक अनुभवहीन नवयुवक हूं। यह काम सौंपकर आपने मुझ-

पर उपकार ही किया है, क्योंकि आगे चलकर मुझे कांग्रेस में काम करना है। उसका कामकाज समझने का मुझे आपने अलभ्य अवसर दिया है।"

: ६२ :

मैं आपको ज्यादा तनखा नहीं दे सकूंगा

जोहानिसबर्ग में एक शाकाहारी भोजन-गृह था। गांधीजी उसमें नियम से सुबह-शाम भोजन के लिए जाते थे। अलबर्ट वेस्ट भी आते थे। वहीं उनका और गांधीजी का परिचय हुआ। वह एक दूसरे गोरे के साझे में एक छापाखाना चला रहे थे। उस वर्ष (सन् १९०४ में) वहां भारतीयों में भीषण प्लेग का प्रकोप हुआ। गांधीजी रोगियों की सेवा-शुश्रूषा में लग गये। इस कारण उस भोजन-गृह में उनका जाना अनियमित हो गया। जब-कभी जाते भी तो सबसे पहले ही भोजन कर लेते थे। उन्हें इस बात का खयाल था कि दूसरे गोरे शायद उनके संसर्ग में आने से डरें, लेकिन जब लगातार दो दिन तक वेस्ट ने उन्हें नहीं देखा तो वह घबरा गये। तीसरे दिन सुबह जब गांधीजी हाथ-मुंह धो रहे थे तो वेस्ट ने उनके कमरे का दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खोलते ही वह हँसकर बोले, "आपको देखकर मुझे तसल्ली हुई। भोजनगृह में आपको न देखकर मैं घबरा गया था। अगर मुझसे आपकी कोई सहायता हो सकती हो तो बताइये।"

गांधीजी ने हँसते हुए उत्तर दिया, "रोगियों की शुश्रूषा करोगे ?"

वेस्ट बोले, "क्यों नहीं, जरूर करूंगा। मैं तैयार हूं।"

इस बीच गांधीजी के अन्तर में कुछ और ही चल रहा था। एक क्षण बाद वह बोले, "आपसे मैं दूसरे प्रकार के उत्तर की आशा नहीं करता था। पर इस काम के लिए तो मेरे पास बहुत-से सहायक हैं। आपसे तो मैं इससे भी कठिन काम लेना चाहता हूं। मदनजीत यहींपर रुका हुआ है। 'इण्डियन ओपीनियन' और प्रेस बेसहारे हैं। आप अगर डरबन जाकर उस काम को सम्भाल लें तो सचमुच यह बड़ी भारी सहायता होगी, पर मैं आपको ज्यादा तनखा नहीं दे सकूंगा। सिर्फ दस पौण्ड महीने दूंगा। हां, अगर प्रेस में कुछ लाभ हो तो उसमें आपका आधा हिस्सा होगा।"

वेस्ट बोले, "काम जरूर कुछ कठिन है। मुझे अपने साझीदार की आज्ञा लेनी होगी। कुछ उगाही भी बाकी है, पर कोई चिन्ता की बात नहीं। क्या आज शाम तक की मोहलत आप मुझे दे सकते हैं ?"

छः बजे शाम को वे दोनों फिर मिले। साझीदार की आज्ञा मिल गई थी। उगाही का काम गांधीजी ने स्वयं ले लिया। बस, वेस्ट दूसरे दिन शाम की ट्रेन से डरबन के लिए रवाना हो गये।

देश की मुक्ति के लिए काम आयंगे प्राण निछावर करनेवाले

गांधीजी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने की तैयारी कर रहे थे। फिनिक्स-आश्रम में रहनेवाले एक भाई ने उनसे पूछा कि देश में कहां रहेंगे, और क्या हमें उचित स्थान मिल सकेगा। गांधीजी ने उत्तर दिया, "जहां अनुकूल और उचित स्थान होगा, वहीं रहेंगे। न हो तो कवा गांधी का राजकोट का झोंपड़ा तो है ही। वहीं जाकर डेरा डाल देंगे।"

दूसरे भाई ने सवाल किया, "वहां जायंगे तव हम विलकुल अनजान होंगे। ऐसी हालत में देश-सेवा का क्या काम करेंगे?"

गांधीजी वोले, "जहां रहेंगे वहां एक खेत ले लेंगे। उसमें खेती करेंगे। कातने और बुनने का काम करेंगे। आस-पास की गन्दगी हटाकर जगह साफ करेंगे और भगवान की प्रार्थना करके वातावरण को शुद्ध और पवित्र वनायेंगे।

तीसरे भाई ने पूछा, "परन्तु देश में तो लोग हमसे वड़ी-वड़ी आशाएं लगाये वैठे हैं। यहां के सत्याग्रह-संग्राम में विजय प्राप्त करके जायंगे। इसलिए उनकी ये आशाएं व्यर्थ न होंगी? आपने कल कहा था कि आप देश जायंगे तव काठियावाड़ की पगड़ी, अंगरखा और धोती पहनेंगे और आप यह भी चाहेंगे कि हम भी देश की देहाती पोशाक पहनें। हमारा यह देहाती ढंग देखकर वे लोग निराश हो जायंगे।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "निराश क्यों होंगे ? वे लोग हमें बनावटी अंग्रेजों की तरह टोपवाले न देखकर अपने ही जैसा पायंगे तो उनके मन में हमारे प्रति विश्वास पैदा होगा। हमारी इस पोशाक से पढ़े और बेपढ़े लोगों के बीच का अन्तर मिट जायगा। हम उनके अधिक नजदीक पहुंच सकेंगे। उनके सुख-दुःख को जल्दी से जान सकेंगे और उसमें भाग लेने की कोशिश भी करेंगे।"

एक भाई आतुरता से बीच ही में बोल उठे, "परन्तु बापूजी, देश में आपसे लोग ऐसी आशा रखकर नहीं बैठे होंगे। वहां तो सर फीरोजशाह मेहता और सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जैसे कौंसिलों को गुंजाकर गवर्नर और वायसराय को हिलानेवाले वीर नेता हैं। आप एक अहिंसक लड़ाई जीतकर देश में जायंगे। जिस देश की जनता अपनी गुलामी को दूर करने के लिए विदेशी सत्ता से लड़ी न हो वह तो आपसे देश के लिए योद्धा मांगेंगी। तब आप उसके सामने किसे रखेंगे ?"

गांधीजी गम्भीर होकर बोले, "यह बात तुमने सच कही। उस समय मैं अपने योद्धाओं को जनता के सामने पेश करूंगा। कहूंगा यह रहे मेरे योद्धा, जिन्होंने देश की सेवा के लिए कई बार कष्ट भुगतकर जेल को महल माना है। गरीबी का व्रत लेकर सारा जीवन अर्पण करने का निश्चय किया है। यह रहे मेरे सिपाही, जो देश-सेवा की खातिर कोई भी खतरा उठाने को तैयार हैं, जो जरूरत पड़ने पर बीमारों की सेवा करेंगे, भूखे पेट रहकर अपना रोटी का टुकड़ा दूसरे के मुंह में डाल देंगे, लोगों का मलमूत्र साफ करने में भी जी नहीं चुरायंगे, देश के

लिए जेल जाने या फांसी के तख्ते पर चढ़ने में भी जिन्हें हिच-किचाहट नहीं होगी। ...हिन्दुस्तान की मुक्ति के लिए राजा-महाराजा, रायबहादुर और खानबहादुर, सर और नाइट, वकील और बैरिस्टर काम नहीं आयंगे, कौंसिलों और असेम्बलियों को हिला देनेवाले भी काम नहीं आयंगे, काम आयंगे प्राण निछावर करनेवाले लोग, त्यागी वीर और वीरांगनाएं, सारा जीवन देशसेवा की आग में तपा देनेवाले साधु चरित्र, निडर, विरोधियों की गोलियां खुली छाती पर झेलनेवाले और फांसी के तख्ते पर दौड़ते-दौड़ते चढ़ जानेवाले वीर सत्याग्रही योद्धा। मेरे पास जो पूंजी है, वह तो मैं देश के चरणों में रख दूंगा, लेकिन यह भी देखूंगा कि सारे देश में इतनी पूंजी और कितनी है!"

: ६४ :

कोई भी देश के लिए मरने को तैयार नहीं

गांधीजी प्रसिद्ध उदारवादी नेता श्री गोपालकृष्ण गोखले को अपना राजनैतिक गुरू मानते थे। जब वह दक्षिण अफ्रीका से वापस भारत लौटे तो गोखले ने उनसे कहा, "आप पहले पूरे बारह महीने देश का भ्रमण कीजिए, उसके बाद ही आपको अपना आगे का कार्यक्रम निश्चित करना उचित होगा। तबतक चुप रहिये।"

गांधीजी ने इस आदेश का अक्षरशः पालन किया। जिस दिन

बारह महीने पूरे हुए उस दिन सांध्य-प्रार्थना के बाद डा० हरि-प्रसाद देसाई ने उनसे पूछा, "कहिए, आपने हिन्दुस्तान देख लिया ? अब आपका क्या मत है ?"

उत्तर में गांधीजी ने एक दीर्घ निःश्वास खींची और बोले, "सब जगह वही बात है। कोई भी देश के लिए मरने को तैयार नहीं।"

डा० देसाई को यह अच्छा नहीं लगा। कुछ चिढ़कर उन्होंने कहा, "यह आप क्या कहते हैं ? पंजाब तो सच्चे हृदय वालों का प्रदेश है। वहां लाला लाजपतराय हैं। महाराष्ट्र में लोकमान्य तिलक हैं और बंगाल में तो क्रान्तिकारी युवक जान हथेली पर लिये फिरते हैं। क्या ये सब लोग नाटक करते हैं ?"

गांधीजी गम्भीर हो आये। बोले, "मैंने जो कुछ कहा है बहुत सोच-समझ कर कहा है। मैं जानता हूं, मेरी बात इन महा-पुरुषों के विरुद्ध जाती है, फिर भी मैंने जो भी कुछ कहा है, उसमें से एक भी शब्द वापस नहीं लूंगा। क्रांतिकारी मरने के लिए तैयार हैं, परन्तु मैं उनके कार्यक्रम से सहमत नहीं हूं। इसलिए उन्हें अभी एक ओर रहने दो। लोकमान्य के प्रति मेरे हृदय में अपार भक्ति है, लेकिन जब मैं दक्षिण अफ्रीका में था, उस समय उन्होंने बराबर तीन दिन तक अपनी सब शक्ति लगाकर अदा-लत में यह साबित करने की कोशिश की थी कि वे राजद्रोही नहीं हैं तब मैं कांप उठा था। मुझे लगा था कि वे ऐसा क्यों नहीं कह देते—जिस तरह आज हिन्दुस्तान में शासन चल रहा है उसके प्रति तो मैं विद्रोह करूंगा ही। विद्रोह नहीं करूंगा तो क्या करूंगा ? यह गुनाह तो मैंने किया है, इसलिए इसके लिए

तुम अधिक-से-अधिक जो भी दण्ड दे सकते हो, मुझे दो। अगर तुम मुझे छोड़ भी दोगे तो मैं यह गुनाह किये ही जाऊंगा।'... परन्तु लोकमान्य ने ऐसा कुछ भी नहीं कहा। वह 'शठं प्रति शाठ्यम्' में विश्वास करते हैं और 'मैं शठं प्रति सत्यम्' में। हम दोनों में यही बड़ा मतभेद है।"

: ६५ :

मेरे सुख के लिए दूसरों को कष्ट क्यों दें

गांधीजी काश्मीर से लौट रहे थे। रास्ते में वर्षा होने लगी और उनका तीसरी श्रेणी का डिब्बा चूने लगा। चारों तरफ पानी फैल गया। एक स्टेशन पर गार्ड ने आकर कहा, "आप डिब्बा बदल लीजिए।"

गांधीजी ने पूछा, "इस डिब्बे का आप क्या करेंगे ?"

गार्ड ने उत्तर दिया, "आपके लिए मैंने एक डिब्बा खाली करवाया है। उसके मुसाफिरों को यहां बैठा दूंगा।"

गांधीजी बोले, "अगर इस डिब्बे में दूसरे लोग बैठ सकते हैं तो मैं क्यों नहीं बैठ सकता ? मेरे सुख के लिए दूसरों को कष्ट क्यों दें ?"

गार्ड चुप हो गया। क्या उत्तर देता ? कुछ देर बाद उसने कहा, "मैं आपकी और क्या सेवा कर सकता हूं ?"

गांधीजी बोले, "आपके लायक तो बहुत सेवाएं हैं। आप

लोगों को परेशान न करें, रिश्वत न लें। इतना ही आप करेंगे तो मेरी बहुत बड़ी सेवा होगी।"

: ६६ :

राजा से ज्यादा सम्मान हम अपने नेता को दे सकते हैं

गांधीजी के पास जो अनेक पत्र आते थे उनमें से बहुतों का कुछ भाग कोरा रहता था। उसको वह फाड़ लेते थे। पिन होती थी तो उसे भी निकालकर रख लेते थे। इसीकी चर्चा करते हुए एक दिन बोले, "हफ्ते भर के उपयोग के लिए मुझे जितने कागज चाहिए वे तो इन पत्रों में से ही निकल आते हैं। पिनें कभी खरीदी हों, ऐसा याद नहीं आता।"

"दक्षिण अफ्रीका में भी आप ऐसा ही करते थे?" किसी ने पूछा।

गांधीजी ने उत्तर दिया, "हां, वहां भी ठीक इसी तरह काम करता था। 'नैटाल इण्डियन कांग्रेस' की रसीद बुकें छपवाने के बजाय मैंने स्वयं साइक्लोस्टाइल की थीं। जिस समय कमाता था तब भी और जब कमाना छोड़ दिया उस समय भी खर्च करने के बारे में मेरी यही वृत्ति रही है। जिस समय कमाता था, उस समय जो रुपया बचता था, उसे भाई को भेज देता था। अपनी किफायतशारी के कारण मैंने वहां हजारों रुपयों की बचत

की। फिर भी जहां खर्च करना उचित था, वहां मैंने आगापीछा नहीं देखा। गोखले को १०१ पौण्ड का तार मैंने ही भेजा था और जब वह वहां गये थे तब उनके लिए क्लार्क्सडोप्ससे जोहानिसबर्ग तक स्पेशल गाड़ी ले गया था। स्टेशन को खूब सजाया था। ७५ पौण्ड का तो एक दरवाजा ही था।"

"स्पेशल तो आवश्यक कही जा सकती है, पर क्या दरवाजा भी जरूरी था?" अगला प्रश्न था।

गांधीजी ने उत्तर दिया, "हां, वहां उस समय जरूरी था। हिन्दुस्तानियों को जगाना जो था। उन्हें बताना था कि जब राजा या युवराज आता है तब उसे जो सम्मान मिलता है उससे ज्यादा सम्मान हम अपने नेता को दे सकते हैं। यह दिखाना था कि गोखले कुली नहीं हैं, बल्कि एक असाधारण व्यक्ति हैं, लेकिन मैंने कांग्रेस के रुपये खर्च नहीं किये। लोगों से मैंने कह दिया था कि सारा खर्च उन्हें ही देना होगा। स्वागत के लिए मैंने पन्द्रह सौ पौण्ड मंजूर कराये थे। जोहानिसबर्ग में तो हद ही हो गई थी। सोने की प्लेट में रखकर मान-पत्र दिया गया था। गोरों पर इस बात का बहुत असर हुआ। मेयर ने अपनी मोटर श्री गोखले के उपयोग के लिए दे दी थी।"

राग तो श्रुति है !

कन्या गुरुकुल, देहरादून की आचार्या विद्यावती और प्रोफेसर रामदेव ने गांधीजी को गुरुकुल में आने का निमन्त्रण दे रखा था। यात्रा करते हुए जब वह देहरादून पहुँचे तो कन्या गुरुकुल में भी गये। बालिकाओं ने बड़े उत्साह से उनका स्वागत किया। मंगलाचरण में संस्कृत के पद गाये।

कार्यक्रम के अन्त में गांधीजी का आशीर्वाद देनेके लिए उठे। और बातों के साथ-साथ उन्होंने कहा, "राग का दर्जा भाषा और कविता से बहुत ऊंचा है। राग-रागनियां तो वर्ण-व्यवस्था की उपासक ठहरीं। तुमने घनाक्षरी के स्वरों में भीम पलासी के स्वर मिला दिये। ऐसा करने से राग वर्ण-संकर हो जाता है। भले ही किसी मात्रा को लघु से दीर्घ करना पड़े, परन्तु स्वर को बदलना ठीक नहीं होगा। स्मृति की भूल माफ हो सकती है, पर श्रुति की नहीं। राग तो श्रुति है।"

यह सुनकर सारी सभा आश्चर्य से चकित रह गई।

मैंने जो कदम उठाया है, सही है

गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में वकालत कर रहे थे। एक मुवक्किल उनके पास आया। प्रिटोरिया शहर में उसकी जमीन थी। शहर के बीच में होने के कारण वह बहुत ही उपयोगी और मूल्यवान् थी। गांधीजी के साथ कैलनबैक उस भूमि पर मकान बनाना चाहते थे। इसी सम्बन्ध में उस मुवक्किल ने गांधीजी से एक दस्तावेज तैयार करवाया। उस दस्तावेज की शर्त के अनुसार कैलनबैक का मकान बीस वर्ष बाद मुवक्किल को मिलनेवाला था।

वह मुवक्किल एक प्रसिद्ध आदमी था। एक सत्यप्रिय व्यक्ति के रूप में नगर में उसकी प्रतिष्ठा थी। इसी आधार पर गांधीजी ने कैलनबैक को यह विश्वास दिलाया था कि वह व्यक्ति दस्तावेज की रजिस्ट्री करा देगा। कैलनबैक ने मकान बनवाना शुरू कर दिया। दिन बीते, महीने भी बीत गये, लेकिन गांधीजी के मुवक्किल ने दस्तावेज की रजिस्ट्री नहीं कराई। मकान बनानेवाले का बिल चढ़ता जा रहा था, लेकिन उसका भुगतान कौन करे? कैलनबैक ने अपने सालीसीटर से परामर्श किया। उसनें कहा, "मुकदमा चलाने के अलावा और कोई रास्ता नहीं है।"

इस समय तक कैलनबैक गांधीजी के भक्त नहीं बने थे। उनका परिचय अभी आरम्भ ही हुआ था, लेकिन वह उनकी सर-

लता और सत्यप्रियता से काफी प्रभावित हो चुके थे। इसलिए उन्होंने सोचा कि दावा करने से पहले गांधीजी से भी मिल लेना चाहिए। शायद वह कोई रास्ता निकाल सकें।

गांधीजी स्वयं बैरिस्टर थे। यह मामला स्पष्ट ही विश्वास-घात का था, लेकिन फिर भी कानून का सहारा लेना उन्हें उचित न लगा। सब बातें सुन लेने के बाद उन्होंने पन्द्रह सौ पौण्ड (उन्नीस हजार आठ सौ पैंतीस रुपये) का चैक काटा और कैलनबैक के हवाले कर दिया।

कैलनबैक यहूदी थे। लेन-देन और लाभ-हानि के सम्बन्ध में काफी सतर्क थे, लेकिन उन्होंने यह कल्पना भी नहीं की थी कि अपने मुवक्किलकी प्रतिष्ठा के लिए गांधीजी ऐसा कदम उठायंगे। उन्होंने हिचकिचाते हुए कहा, "गांधीभाई, यह आप क्या करते हैं? आपके पास जमानत कहां है? जमानत के बिना इतनी बड़ी रकम मुझे कैसे दे सकते हैं?"

गांधीजी बोले, "मैंने जो कदम उठाया है, वह सही है।"

उस दिन के बाद कैलनबैक गांधीजी के साथ जीवन भर के लिए स्नेह के बंधन में बंध गये।

संदर्भ

इस पुस्तक के प्रसंग जिन पुस्तकों से सम्पादित रूप में लिये गए हैं, उनके नाम, प्रसंगों की संख्या तथा लेखकों के नाम साभार नीचे दिये जा रहे हैं :

आत्मकथा (मो० क० गांधी) ६१
आत्मकथा (राजेन्द्रप्रसाद) ४३
इंग्लैंड में गांधीजी (महादेव देसाई) ५७, ५८, ६०
एकला चलो रे (मनुबहन गांधी) १३, १४, १७
ऐसे थे बापू (आर० के० प्रभु) ५६
ऐसे थे हमारे बापू (जयप्रकाश भारती) ४
कलकत्ते का चमत्कार (मनुबहन गांधी) ६५
कुछ देखा, कुछ सुना (घनश्यामदास बिड़ला) ८
गांधी : व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (संकलन) पोलक १
" " (संकलन) १२
" " (महावीर त्यागी) ६७
गांधी : संस्मरण और विचार (संकलन) ६२
गांधीजी की देन (राजेन्द्रप्रसाद) ४४
गांधीजी की यूरोप-यात्रा (मिस म्यूरियल लीस्टर) ५६
गांधीजी की साधना (रावजीभाई पटेल) ३२, ५५, ६३
गांधीजी के जीवन-प्रसंग (सुशीला नैयर) ४२
" " (टी० एस० एस० राजन) ५६
गांधीजी के पावन प्रसंग भाग १ (लल्लूभाई, मकनजी) ३५, ४८
" " भाग २ (" ") ६८
गांधीजी के संपर्क में (सम्पा० चन्द्रशंकर शुक्ल) ३६, ६४
बा और बापू (मुकुलभाई कलार्थी) ३७, ४१
बा और बापू की शीतल छाया में (मनुबहन गांधी) २८
बापू की कारावास-कहानी (सुशीला नैयर) २७

संदर्भ

बापू की छाया में (हीरालाल शर्मा) २

बापू की झाँकियां (काका कालेलकर) २१, ३८, ४०, ४५

बापू की बातें (विष्णु प्रभाकर) ५६

बापू की मीठी-मीठी बातें (साने गुरुजी) ३४, ४७

बापू के आश्रम में (हरिभाऊ उपाध्याय) ५४

बापू के चरणों में (ब्रजकृष्ण चांदीवाला) ७, १९

बापू के जीवन की एक झलक (परशुराम मेहरोत्रा) ३१

बापू के जीवन-प्रसंग (मनुबहन गांधी) १०, ११, १८, २२, २५

बापू : मैंने क्या देखा, क्या समझा (रा० ना० चौधरी) ३७

बापू के संस्मरण (रामजनमसिंह शिरीष) १६

" " (शांतिकुमार) ३३, ३९

बिहार की कौमी आग में (मनुबहन गांधी) ६

महात्मा गांधी : पूर्णाहुति (प्यारेलाल) ३, २०, २३, २४, २६, २९, ४९

महादेवभाई की डायरी भाग १ (महादेव देसाई) ५१

" " भाग ३ " " ४६, ५०, ६६

" " भाग ४ " " ५

माई डेज विद गांधी (डॉ० एम० के० बोस) १५

यरवदा के अनुभव (मो० क० गांधी) ५३

हिन्दुस्तान दैनिक (जी रामचंद्रन) ५२